Annual Subscription Fee Rs. 100/- 3rd January 2016

ओ३म्

आर्य जीवन

આર્ય જીવન

गौ एवं पशु सम्पदा की रक्षा के लिए दिल्ली के जन्तर-मन्तर पर सार्वदेशिक सभा द्वारा विशाल जन प्रदर्शन

प्रदर्शन में भाग लेते हुए स्वामी अग्निवेश जी, स्वामी आर्यवेश जी तथा श्री विट्ठल राव आर्यजी एवं अन्य अधिकारि एवं प्रेमपाल शास्त्री और अनिल आर्य तथा अन्य

गौ रक्षा के लिए
सार्वदेशिक सभा द्वारा आयोजित महाप्रदर्शन में भाग लेते हुए हज़ारों की संख्या में आर्यजन

गौ

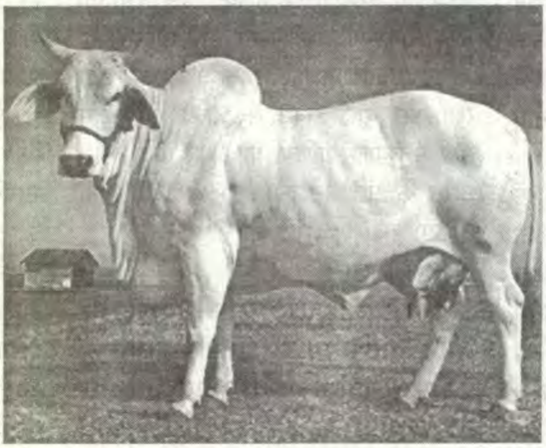

इन्द्रो विश्वस्य-हे जगदीश्वर ! आप विद्युत् के समान संसार के बीच प्रकाशमान हैं । आपके अनुग्रह से हमारे (द्विपदे) पुत्रादि के लिए और (चतुष्पदे) पश्वादि के लिए सुख हो ।

इस वेद मन्त्र के द्वारा परमेश्वर की स्तुति करके ग्रन्थकार स्वरचित शलोकों में याचना के स्वर में प्रभु से प्रार्थना करते हैं-

तनोतु-सर्वशक्तिमान् दयालु परमेश्वर गौ आदि समस्त प्राणियों की रक्षा के लिए हमें प्रेरित करे और इसके मार्ग में आनेवाली बाधाओं को दूर करे ।

जो भद्र पुरुष हृदय से गोसंरक्षण के कार्य में लगे हों वे धर्म में प्रवृत्ति के फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले सुख और आनन्द को प्राप्त करें । इसके विपरीत जो मूर्ख और क्रूर लोग हत्या-जैसा जघन्य पाप करते हैं वे कदापि उस सुख को प्राप्त न हों ।

धन्य लोग-सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास के आरम्भ में ग्रन्थकार ने स्वरचित एक श्लोक में 'धन्य' कहलानेवाले पुरुषों के गुणों का विवेचन करते हुए अन्त में लिखा है-

संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये धन्या नरा विहितकर्मपरोपकाराः ॥

गोस्वामी तुलसीदास के अनुसार-

परहित सरिस धरम नहीं भाई । परपीड़ा सम नहीं अधमाई ॥

भर्तृहरि ने मनुष्यों में विभिन्न कोटियों का विवेचन इस प्रकार किया है-

एके स्तपुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये,

सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृताः स्वार्थाविरोधेन ये ।

तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,

ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥

भावार्थ-संसार में वे लोग सत्पुरुष (उत्तम कोटि के मनुष्य) हैं जो अपने स्वार्थ को तिलांजलि देकर भी दूसरों का भला करते हैं । वे सामान्य (मध्यम कोटि के) मनुष्य हैं जो, अपना काम न विगाड़ते हुए दूसरों का कार्य सिद्ध करते हैं । वे राक्षस (अधम कोटि के लोग) हैं जो अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए दूसरों का काम बिगाड़ते हैं, परन्तु जो लोग विना किसी स्वार्थ के व्यर्थ ही दूसरों के हित की हानि करते हैं, उन्हें किस नाम से पुकारा जाए, यह हम नहीं जानते, क्योंकि वे राक्षसों से भी गये-बीते महानीच हैं ।

भर्तृहरि ने यहाँ अपने समय के चार प्रकार के लोगों का ही उल्लेख किया है । वर्त्तमान में पाँचवीं कोटि के लोग भी मिलते हैं-वे जो अपनी हानि करके भी दूसरों की हानि करने में प्रसन्न होते हैं । ऐसे लोग अपनी नाक कटाकर दूसरे का अपशकुन करने में संकोच नहीं करते अथवा यदि पड़ौसी की दोनों आँखें फूट जाएँ तो अपनी एक आँख फुड़वाने को तैयार हो जाएँगे ।

सुख-दुःख का अनुभव-जीवात्मा का लक्षण करते हुए न्यायदर्शन में लिखा है-

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति ॥ - १।१।१०

अर्थात् जिसमें राग, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान गुण हों वह जीवात्मा है । इसके साथ यह भी सत्य है कि 'दुःखादुद्विजते लोकः सर्वस्य सुखमीप्सितम्'-प्राणिमात्र सुख चाहता और दुःख से दूर भागता है । इसलिए महाबारत में कहा है-''आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्''-तनिक-सा काँटा चुभने पर कितनी पीड़ा होती है, यह जानते हुए भी किसी के गलो पर छुरी फेरना महापाप नहीं तो क्या है ? और इतना बड़ा पाप मात्र जिह्वा के स्वाद के लिए करनेवाला 'मनुष्य' पद का अधिकारी कैसे हो सकता है-

एकस्य क्षणिका प्रीतिरन्यः प्राणैर्विमुच्यते ।

मरनेवाले की जान चली गई और खानेवाले को स्वाद नहीं आया, क्योंकि उसमें मिर्च-मसाला कम था । इसीलिए ग्रन्थकार ने लिखा है- 'बिना किसी अपराध के किसी प्राणी का प्राण वियोग करके अपना पोषण करना, यह सत्पुरुषों के सामने निन्दित कर्म क्यों न होवे ।'

भूल सुधार-ग्रन्थकार ने कहीं भी अपने को निर्भ्रान्त नहीं माना है ।

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।

इसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥

इसलिए उन्होंने ऐसे स्थलों में अपेक्षित सुधार की छूट दे दी है, परन्तु इस कार्य में अत्यन्त सावधान रहने की आवश्यकता है

श्वेतक्रान्ति-हरित क्रान्ति-'दुग्ध आदि पदार्थों और खेती आदि क्रियाओं की सिद्धि-गौ और कृषि दोनों का चोली-दामन का सम्बन्ध है । इन्हीं को अब श्वेत क्रान्ति (White revolution) और हरित क्रान्ति (Green revolution) का नाम दिया गया है। ग्रन्थकार ऋषि होने से क्रान्तदर्शी थे । इन दोनों को लक्ष्य करके ही ग्रन्थकार ने भारत सरकार की तरह 'गोसंवर्द्धन समिति' न बनाकर 'गोकृष्यादिरक्षिणीसभा' की स्थापना का विचार दिया था ।

अथ गोकरुणानिधिः

प्रारभ्यमाण ग्रन्थ के नामनिर्देश में 'अथ' पद का प्रयोग प्राचीन काल से चला आता है। भारतीय साहित्य में इसके प्रयोग को मांगलिक माना जाता है । साधारणतया 'अथ' का अर्थ 'प्रारम्भ करना' माना जाता है, पर प्राचीन परम्परा उच्चारणमात्र से इसे मांगलिक मानती आई है । अज्ञातकाल से ही गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा एक श्लोक चला आता है-

ओङ्कारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा कण्ठं भित्त्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ

कतिपय विद्वानों का मत है कि मङ्गला

चरण की प्रथा मध्यकालिक आचार्यों से चली है, प्राचीन आर्यों मे ऐसी मान्यता नहीं रही, परन्तु ग्रन्थकारं इससे सहमत नहीं हैं । अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को आरम्भ करते हुए उन्होंने चालू प्रथा का पूरी तरह पालन किया है । इतना ही नहीं, समुल्लास के अन्त में वैदिक दृष्टि के अनुसार इसका विवेचन भी प्रस्तुत किया है । मंगलाचरण की पौराणिक व तान्त्रिक प्रथा अमान्य है, किन्तु ग्रन्थकार ने अपने सभी ग्रन्थों में वैदिक मान्यता को बनाए रक्खा है ।

मध्यकालिक आचार्यों ने ग्रन्थारम्भ में मंगलाचरण का प्रयोजन विघ्न-बाधाओं का नाश माना है, पर गर्न्थकार इससे सहमत प्रतीत नहीं होते । सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास के अन्तिम भाग में सांख्यदर्शन का सूत्र उद्धृत कर उन्होंने कहा है- ''मङ्गलाचरणं शिष्टाचारात् फल- दर्शनात् श्रुतितश्चेति'' ५। १ अर्थात् ऐसा आचरण जो न्याय, पक्षपातरहित सत्य तथा वेदोक्त ईश्वर की आज्ञानुसार यथावत् सर्वत्र और सदा अनुष्ठान में आवे, उसी को मङ्गलाचरण कहना चाहिए । विघ्न-बाधाओं को दूर हटाते हुए किसी ग्रन्थ की सम्पूर्णता एवं प्रारम्भ किये हुए किसी कार्य की निर्वाध सम्मपन्नता ग्रन्थरचना वा कार्य करने वाले व्यक्ति के ताद्विषयक विशेष ज्ञान, धैर्य, उत्साह तथा अनवरत परिश्रम पर निर्भर करती है । प्रत्येक कार्य में अनेक प्रकार की विघ्न-बाधाएं सम्भव हैं । ऐसी बाधाओं के प्रतीकार भिन्न-भिन्न हिते हैं । केवल मङ्गलाचरण उनका प्रतीकार नहीं है । इसलिए मङ्गलाचरणं की वास्तविकता को समझकर ही उसकी उपादेयता पर ध्यान देना उचित व उपयुक्त होगा ।

गोकृष्यादिरक्षिणीसभा

प्रथम बार संवत् १९३७ के अन्त में प्रकाशित गोकरुणानिधि के दो भाग हैं । प्रथम भाग में गौ आदि पशुओं को मारकर खाने की अपेक्षा उनकी रक्षा करके उनके घी-दूध द्वारा अधिक लाभ होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है और मांसाहार से होने वाली हानियों का विवेचन करते हुए निरामिष भोजन के महत्त्व को दर्शाया गया है । दूसरे भाग में गवादि पशुओं की रक्षा के लिए स्थापित की जानेवाली गोरक्षिणी सभा के नियमोपनियम दिये गये हैं । प्रायः प्रकाशक गोकरुणानिधि पुस्तक के इस भाग को अनावश्यक समझकर अथवा प्रथम भाग को अधिक महत्त्वपूर्ण मानकर उसकी उपेक्षा कर देते हैं । यह ऋषि के अभिप्राय के विरुद्ध है। अन्तथ- गौ और कृषि दोनों अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए ऋषि ने सभा के नाम की व्याख्या करते हुए स्पष्ट लिखा है कि ''इस सभा का नाम 'गोकृष्यादिरक्षिणिसभा' इसलिए रखा है, जिससे गवादि पशु और कृष्यादि कर्मों की रक्षा और वृद्धि होकर सब प्रकार के उत्तम सुख मनुष्यादि प्राणियों को प्राप्त होते हैं ।'' भारत के संविधान की धारा ४९ की रचना लगभग इन्हीं शव्दों में की गई है ।

वहाँ लिखा है-

Organisation of agriculture and animal husbandary- "The State shall endeavour to organise agriculture and animal husbandry on modern and scientific lines and shall in particular, take steps for preserving and improving the breeds, and prohibiting the slaughtering of cows and calves and other milch and draught cattle."

अर्थात् कृषि और पशुपालन (गोकृष्यादि) का संगठन (सभा)-राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्राणालियों से संगटित करने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठाएगा

इन्द्रियों का प्रयोजन-आत्मा को कर्मफल का उपभोग करने के लिए बाह्य जगत् से सम्पर्क करना पड़ता है, क्योंकि विषयरूप भोग-सामग्री बाह्य जगत् में ही उपलब्ध है, आत्मा शरीर के भीतर रहता है । बाहर उसकी गति नहीं । इसलिए उसे बाह्य जगत् से सम्पर्क करने के लिए ऐसे साधन की आवश्यकता है जो आत्मा और शरीर दोनों के बीच माध्यम का कार्य कर सके । इसी मध्यस्थ या सम्पर्क अधिकारी को 'मन' कहते हैं, परन्तु मन भी शरीर से बाहर नहीं जा सकता । कार्यालय के भीतर बैठे-बैठे कार्य-सम्पादन के लिए उसे भी ऐसे सहायकों की आवश्यकता होती है, जो बहिर्मुख होने के कारण बाह्य जगत् से सीधा सम्बन्ध रखते हों, इन्हीं को इन्द्रियाँ कहते हैं । इनका स्वामी होने से आत्मा 'इन्द्र' कहलाता है । प्रत्येक इन्द्रिय का उसके लिए नियत कार्य में लगाना ही उचित है । वेद का आदेश है-''

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्त्राः।''

ऐसा न करके आँखों को फोड़ देना कहाँ कि बुद्धिमत्ता है । पूर्वकृत कर्मों का फल भोगने और वर्तमान में पुरुषार्थ द्वारा मोक्ष का अधिकारी बनने के लिए शरीर मिलता है। उससे इस प्रयोजन की सिद्धि न करके आत्महत्या करके इसे नष्ट करनेवाले को क्या कहेंगे ? इसी प्रकार संसार में दूध प्राप्त करने और कृषि आदि में सहायक होने के लिए परमेश्वर ने गाय, बैल और भैंस आदि पशुओं की सृष्टि की है । उनका इस रूप में उपयोग न करके उनकी हत्या करना स्वयं अपने हाथों अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना है ।

ग्रन्थकार ने सत्यार्थप्रकाश में भी इस विषय का विवेचन किया है । गाय और बैल से प्राप्त होनेवाले दूध और अन्न के हिसाब में सत्यार्थप्रकाश और गोकरुणानिधि की संख्याओं में कुछ भेद है । वह भेद सामान्यभूत अनुमानिक गणना के कारण है । सत्यार्थप्रकाश में सर्वयोग ४७५५०० लिखा है ।

गाय सर्वोत्तम क्यों ?

१. आधुनिक वैज्ञानिक इस बात पर चकित हैं कि प्रत्येक पशु के मांस वा दूध में संखिया का अंश पाया जाता है । गाय के मांस में भी संखिया का अंश पाया जाता है, परन्तु उसके दूध में संखिया का अंश आज तक उपलब्ध नहीं हुआ । इससे भी गाय के दूध का और इस कारण गाय का वैशिष्टय प्रत्यक्ष सिद्ध है ।

२. भैंस का दूध सफेद और गौ का दूध पीला होता है, इसलिए भैंस और गाय के दूध को क्रमशः चाँदी और सोना कहा जाता है । इसे प्रमाणित करने के लिए दोनों के दूध की गुणवत्ता के अन्तर को जानना आवश्यक है। पशु के गुण-दोषों का प्रभाव उसके दूध में देखा जा सकता है और इसे जानने के लिए उसकी सन्तान में अन्तर को देखना आवश्यक है ।

३. गाय का तीन दिन का बछड़ा उछलता-कूदता चलता है, जबकि भैंस का पाड़ा तीस दिन का भी जड़-सा पड़ा रहते है । इससे स्पष्ट है कि गाय का दूध पीने से स्फूर्ति आती है और भैंस का दूध पीने से आलस्य आता है ।

४. बीस भैंसों के बीच में पाड़े को छोड़ा जाए तो वह सीधा अपनी माँ के पास नहीं पहुँचेगा, जबकि बछड़ा ५० गायों के बीच में छोड़ा जाने पर भी सीधा अपनी माँ के पास पहुँच जाएगा । इससे गाय का दूध पीने से बौद्धिक स्तर की उत्कृष्टा प्रत्यक्ष सिद्ध है । पाड़े में तो दूर से अपनी माँ को पहचानने तक की भी बुद्धि नहीं होती ।

५. गाय के बछड़ों के नाम रख दिये जाएँ तो वे अपना नाम पुकारे जाते ही दौड़कर पुकारनेवाले के पास पहुँच जाते हैं, परन्तु भैंस और उसके पाड़े में अपने नाम को सुनकर कोई प्रतिक्रिया नहीं होगी, क्योंकि उनमें नाम को पहचानने की क्षमता का विकास नहीं होता ।

६. राजस्थान के बीकानेर, बाड़मेर, जैसलमेर आदि जिलों में एक गाय के गले में घण्टी बाँध देते हैं । हर ग्वाले की गाएँ गण्टीवाली गाय के साथ ही मीलों का चक्कर काटकर नियत समय पर घर वापस पहुँच जाती हैं । एक भी गाय कम न होगी, न बढ़ेगी, परन्तु केवल दस भैंसों को घण्टी बाँधकर छोड़ा जाएगा तो भी एक साथ नहीं आएँगी । देर तक इधर-उधर भटककर आगे-पीछे आएँगी--न समय का ज्ञान, न स्थान की पहचान और न समूह की जानकारी ।

७. गाय का दूध तो उत्तम गुणों की खान है ही, उसका गोबर और मूत्र भी भैंस की तुलना में कहीं अधिक श्रेष्ठ है । गाय के गोबर की खाद खती में तीन साल तक काम देती है, पर भैंस के गोबर की खाद दो साल बाद बेकार हो जाती है । गाय के गोबर में एक बड़ा गुण यह है कि वह अपने-आपमें कीटनाशक है । आस्ट्रेलिया में फसल पर गोमूत्र स्प्रे करके कीटनाशक दवा का काम लिया जाता है ।

८. गोमूत्र महान् ओषधि है । आयुर्वेद शास्त्र में गोमूत्र से अथवा उसके योग से तैयार ओषधियों से पचासों रोगों की चिकित्सा का उल्लेख हुआ है ।

९. भारत में आज भी ७५ प्रतिशत खेती बैलों से हो रही है । जैसी और जितनी उत्तम खेती गो-जायों से हो सकती है वैसी और उतनी उत्तम खेती भैंसे नहीं कर सकते ।

१०. देसी गाय कड़ी धूप सहन कर सकती है । सूरज की किरण सहन करने से दूध नीरोग होता है, अतः वह अधिक स्वास्थ्यप्रद होता है । भैंस तथा संकर गाय कड़ी धूप सहन नहीं कर सकते ।

११. दिनभर कड़ी धूप में बैल काम कर सकता है । भैंसा कड़ी धूप में देर तक नहीं टिक सकता ।

१२. भैंसे की गाड़ी नाले में फँस जाए तो भैंसे बैठ जाएँगे पर बैल निकाल ले-जाएँगे ।

१३. भैंस का ही नहीं, संकर गाय का नर भी खेती जोतने में अधिक काम नहीं देता । इसके लिए देसी गाय की नस्ल ही उपयोगी होती है ।

१४. भैंस के घी के कण कड़े होते हैं जो आसानी से नहीं पचते । इसलिए वे बाहर निकल जाते हैं । भैंस के दूध को गरम करने से उसके विटामिन नष्ट हो जाते हैं । गाय के दूध में ऐसा नहीं होता । गाय के दूध के कण सूक्ष्म और सुपाच्य होते हैं, अतः वे मस्तिष्क की सूक्ष्मतम नाड़ियों में पहुँचकर मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करते हैं ।

१५. इंटरनेशनल कार्डियोलोजी कान्फ्रेंस के अध्यक्ष डॉ० शान्तिलाल शाह के मत में भैंस के दूध में लाँग चेन फैट होती है, जो शरीर की नसों में जम जाती है और हार्ट-अटैक का कारण बनती है । हृदयरोगियों के लिए गाय का दूध विशेषरूप से उपयोगी है।

१६. गाय के दूध में क्युरोटिन नामक पीला पदार्थ रहता है जो आँखों की ज्योति बढ़ाता है ।

१७. भारत का दुर्भाग्य है कि उसने अपने ऋषि-मुनियों द्वारा प्रदर्शित मार्ग छोड़ दिया, परन्तु भारतेतर देशों के लोग उसी का अनुसरण करके लाभान्वित हो रहे हैं । संसार के सभी विकसित देशों-इंगलैण्ड, अमेरिका, जर्मनी, जापान, फ्रांस, रूस आदि में सर्वत्र गाय के ही घी-दूध का प्रयोग होता है । कोई भी भैंस को नहीं रखता । एक सौ पचास वर्ष में अंग्रेजी राज में लाखों की संख्या में गाय और साँड विदेशों में गये, भैंस एक भी नहीं। भैंस वहाँ के अजायबघरों या चिड़ियाघरों में प्रदर्शनार्थ रक्खी जाती है ।

१८. गाय का दूध जीवन-शक्ति प्रदान करनेवाले द्रव्यों में सर्वश्रेष्ठ है ।
-चरक सूत्रस्थान २ ।१८

१९. गाय का दूध पथ्य, रसायन, बलवर्धक, हृदय के लिए हितकर, मेधाबुद्धि को बढ़ानेवाला, आयुप्रद, पुंसत्वकारक, वात तथा रक्तपित के विकार को नष्ट करनेवाला होता है । सफेद गाय का दूध वातनाशक, काली गाय का दूध पित्तशामक तथा लाल गाय का दूध कफ नाशक होता है ।
-धन्वन्तरि निघण्टु ७० । १५१, १५२

२०. सदैव गाय का दूध सेवन करने से सब प्रकार के रोग तथा बुढ़ापा नष्ट होता है। काली गाय का दूध अधिक गुणवाला होता है।
-भावप्रकाश निघण्टु दुग्धवर्ग ९-१०

२१. दही-गाय का दही, विशेष मीठा, रुचिकारक, अग्निप्रदीपक, हृदय को प्रिय, पुष्टिकारक और वातनाशक है । गाय का दही सर्वोत्तम है ।
-दही, दधिवर्ग १०

२२. घी - गाय का घी विशेषकर नेत्रों को हितकारी, अग्निप्रदीपक, पाक में मधुर, शीतल, वात-पित्त-कफ़ नाशक, बलवर्धक, पवित्र, आयुवर्धक, रसायन, सुगन्धयुक्त, सुन्दर और सम्पूर्ण घृतों में उत्तम है ।
-वही, घृतवर्ग ४-६

२३. मक्खन-गाय का मक्खन हितकारी, वृष्य, रंग को निखारनेवाला, बलकारी, अग्निप्रदीपक, ग्राही, वात-पित्त-रक्तविकार, क्षय, बवासीर, लकवा तथा खाँसी को नष्ट करनेवाला है । यह मक्खन बालकों और वृद्धों को हितकारी है । बच्चों के लिए तो अमृत-तुल्य है । -वही, नवनीतवर्ग १-२

२४. तक्र-तक्र का सेवन करनेवाले मनुष्य कदापि रोगी नहीं होते । तक्र सेवन से नष्ट रोग पुनः नहीं उभरते । जैसे देवताओं के लिए अमृत होता है, वैसे ही पृथिवी के मनुष्यों के लिए तक्र होता है ।
-वही, तक्र वर्ग-७

लोक में प्रसिद्ध है- **तक्रं शक्रस्य दुर्लभम्**

तक्र या छाछ के पाँच भेद हैं-

१. घोल-दही को बिना पानी डाले, मलाई समेत मथने पर जो द्रव्य तैयार होता है, उसे 'घोलन कहते हैं ।

२. मथित-दही के ऊपर की मलाई उतारकर

..शेष पृ. १० पर

अथ गोकरुणानिधिः

अथ समीक्षा-प्रकरणम् - गोकृष्यादिरक्षिणीसभा

भूमिकाः इन्द्रो विश्वस्य राजति । शन्नों अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥
-य० अ० ३६ । मं० ८ ॥

तनोतु सर्वेश्वर उत्तमम्बलं गवादिरक्षं विविधं दयेरितः ।
अशेषविघ्नानि निहत्य नः प्रभुः सहायकारी विदधातु गोहितम् ॥१॥
ये गोसुखं सम्यगुशन्ति धीरास्ते धर्म्मजं सौख्यमथाददन्ते ।
क्रूरा नराः पापरता न यन्ति प्रज्ञाविहीनाः पशुहिंसकास्ततू ॥२॥

वे धर्मात्मा विद्वान् लोग धन्य हैं, जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव, अभिप्राय, सृष्टि-क्रम, प्रत्यक्षादि प्रमाण और आप्तों के आचार से अविरुद्ध चलके सब संसार को सुख पहुँचाते हैं और शोक है उनपर जोकि इनके विरुद्ध, स्वार्थी, दयाहीन होकर जगत् में हानि करने के लिए वर्तमान हैं। पूजनीय जन वे हैं कि जो अपनी हानि होती हो तो भी सबके हित के करने में अपना तन, मन, धन लगाते हैं और तिरस्करणीय वे हैं जो अपने ही लाभ में सन्तुष्ट रहकर सबके सुखों का नाश करते हैं ।

ऐसा सृष्टि में कौन मनुष्य होगा जो सुख और दुःख को स्वयं न मानता हो ? क्या ऐसा कोई भी मनुष्य है कि जिसके गले को काटे वा रक्षा करे, वह दुःख और सुख का अनुभव न करे ? जब सबको लाभ और सुख ही में प्रसन्नता है तो बिना अपराध के किसी प्राणी का प्राणवियोग करके अपना पोषण करना यह सत्पुरुषों के सामने निन्दित कर्म क्यों न होवे ? सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर इस सृष्टि में मनुष्यों के आत्माओं में अपनी दया और न्याय को प्रकाशित करे कि जिससे ये सब दया और न्याययुक्त होकर कृपापात्र गाय आदि पशुओं का विनाश न करें कि जिससे दुग्ध आदि पदार्थों और खेती आदि क्रियाओं की सिद्धि से युक्त होकर सब मनुष्य आनन्द में रहें

इस ग्रन्थ में जो कुछ अधिक, न्यून वा अयुक्त लेख हुआ हो उसको बुद्धिमान् लोग इस ग्रन्थ के तात्पर्य के अनुकूल कर लेवें । धार्मिक विद्वानों की यही योग्यता है कि वक्ता के वचन और ग्रन्थकर्ता के अभिप्राय के अनुसार ही समझ लेते हैं । यह ग्रन्थ इसी अभिप्राय से रचा गया है, जिससे गो-आदि पशु जहाँ तक सामर्थ्य हो बचाये जावें और उनके बचाने से दूध, घी और खेती के बढ़ने से सबको सुख बढ़ता रहे । परमात्मा कृपा करें कि यह अभीष्ट शीघ्र सिद्ध हो ।

इस ग्रन्थ में तीन प्रकरण हैं-एक समीक्षा, दूसरा नियम और तीसरा उनियम । इनको ध्यान दे पक्षपात छोड़ विचारके राजा तथा प्रजा यथावत् उपयोग में लावें कि जिससे दोनों के लिए सुख बढ़ता ही रहे ।

॥ इति भूमिका ॥

इस सभा का नाम 'गोकृष्यादिरक्षिणी' इसलिए रक्खा है जिससे गवादि पशु और कृष्यादि कर्मों की रक्षा और वृद्धि होकर सब प्रकार के उत्तम सुख मनुष्यादि प्राणियों को प्राप्त होते हैं और इसके बिना निम्नलिखित सुख कभी नहीं प्राप्त हो सकते ।

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ने इस सृष्टि में जो-जो पदार्थ बनाये हैं, वे निष्प्रयोजन नहीं, किन्तु एक-एक वस्तु अनेक-अनेक प्रयोजन के लिए रची है । इसलिए उनसे वे ही प्रयोजन लेना न्याय अन्यथा अन्याय है । देखिए ! जिस लिए यह नेत्र बनाया है, इससे वही कार्य लेना सबको उचित होता है न कि उससे पूर्ण प्रयोजन न लेकर वीच ही में वह नष्ट कर दिया जावे । क्या जिन-जिन प्रयोजनों के लिए परमात्मा ने जो जो पदार्थ बनाये हैं, उन-उनसे वे-वे प्रयोजन न लेकर उनको प्रथम ही विनष्ट कर देना सत्पुरुषों के विचार में बुरा कर्म नहीं है ? पक्षपात छोड़कर देखिए, गाय आदि पशु और कृषि आदि कर्मों से सब संसार को असंख्य सुख होते हैं वा नहीं ? जैसे दो और दो चार, वैसे ही सत्यविद्या से जो-जो विषय जाने जाते हैं वे अन्यथा कभी नहीं हो सकते ।

जो एक गाय न्यून-से-न्यून दो सेर दूध देती हो और दूसरी बीस सेर, तो प्रत्येक गाय के ग्यारह सेर दूध होने में कोई शङ्का नहीं । इस हिसाब से एक मास में सवा आठ मन दूध होता है । एक गाय कम से कम ६ महीने और दूसरी अधिक से अधिक १८ महीने तक दूध देती हैं, तो दोनों का मध्यभाग प्रत्येक गाय के दूध देने में बारह महीने होते हैं । इस हिसाब से बारह महीनों का दूध नित्रानवे मन होता है । इतने दूध को औंटाकर प्रति सेर में छटांक चावल और डेढ़ छटांक चीनी डालकर खीर बना खावें, तो प्रत्येक पुरुष के लिए दो सेर दूध की खीर पुष्कल होती है, क्योंकि यह भी एक मध्यभाग की गिनती है, अर्थात् कोई दो सेर दूध की खीर से अधिक खाएगा और कोई न्यून, इस हिसाब से एक प्रसूता गाय के दूध से १९८० एक हज़ार नवसौ अस्सी मनुष्य एक बार तृप्त होते हैं । गाय न्यून-से-न्यून ८ और अधिक-से-अधिक १८ बार व्याती है, इसका मध्यभाग तेरह बार आया, तो २५,७४० पच्चीस हज़ार सातसौ चालीस मनुष्य एक गाय के जन्मभर के दूधमात्र से एक बार तृप्त हो सकते है ।

इस गाय के एक पीढ़ी में छह बछियाँ और सात बछड़े हुए । इनमें से एक की मृत्यु रोगादि से होना सम्भव है, तो भी बारह रहे । उन छह बछियाओं के दूधमात्र से उक्त प्रकार १,५४,४४० एक लाख चौवन हज़ार चारसौ चालीस मनुष्यों का पालन हो सकता है । अब रहे छह बैल, उनमें एक जोड़ी से दोनों साख में दोसौ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है । इस प्रकार तीन जोड़ी छह सौ मन अन्न उत्पन्न कर सकती हैं और उनके कार्य का मध्यभाग आठ वर्ष है । इस हिसाब से ४८०० मन अन्न उत्पन्न करने की शक्ति एक जन्म में तीन जोड़ी की है । इतने (४८०० मन) अन्न से प्रत्येक मनुष्य का तीन पाव अन्न भोजन में गिनें, तो २,५६,००- दो लाख छप्पन हज़ार मनुष्यों का एक बार भोजन होता है । दूध और अन्न को मिलाकर देखने से

निश्चय है कि ४,१०,४४० चार लाख दश हज़ार चारसौ चालीस मनुष्यों का पालन एक बार के भोजन से होता है। अब छह गाय की पीढ़ी पर पीढ़ीयों का हिसाब लगाकर देखा जावे तो असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है और इसके मांस से अनुमान है कि केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक बार तृप्त हो सकते हैं। देखो ! तुच्छ लाभ के लिए लाखों प्राणियों को मार असंख्य मनुष्यों की हानि करना महापाप क्यों नहीं ?

यद्यपि गाय के दूध से भैंस का दूध कुछ अधिक और बैलों से भैंसा कुछ न्यून लाभ पहुँचता है, तथापि जितना गाय के दूध और बैलों के उपयोग से मनुष्यों को सुखों का लाभ होता है उतना भैंसियों के दूध और भैंसों से नहीं, क्योंकि जितने आरोग्यकारक और बुद्धिवर्द्धक आदि गुण गाय के दूध में और लाभ बैलों से होते हैं, उतने भैंस के दूध और भैंसे आदि से नहीं हो सकते। इसलिए आर्यों ने गाय सर्वोत्तम मानी है।

और ऊँटनी का दूध गाय और भैंस के दूध से भी अधिक होता है, तो भी इनका दूध गाय के सदृश नहीं। ऊँट और ऊँटनी के गुण भार उठाकर शीघ्र पहुँचाने के लिए प्रशंसनीय हैं।

अब एक बकरी कम-से-कम एक और अधिक-से-अधिक पाँच सेर दूध देती है, इसका मध्यभाग प्रत्येक बकरी से ३ सेर दूध होता है और न्यून-से-न्यून तीन महीने और अधिक से अधिक पाँच महीने तक दूध देती है, तो प्रत्येक बकरी के दूध देने में मध्यभाग चार महीने हुए। वह एक मास में २। सवा दो मन और चार मास में ९ नव मन होता है। पूर्वोक्त प्रकारानुसार इस दूध से १८० एक सौ अस्सी मनुष्यों की तृप्ति होती है और एक बकरी एक वर्ष में दो बार ब्याती है। इस हिसाब से एक वर्ष में एक बकरी के दूध के एक बार भोजन से ३६० तीनसौ साठ मनुष्यों की तृप्ति होती है। कोई बकरी न्यून-से-न्यून चार वर्ष और कोई अधिक-से-अधिक ८ आठ वर्ष तक ब्याती है, इसका मध्य भाग छह वर्ष हुआ, तो जन्मभर के दूध से २, १६० दो हज़ार एक सौ साठ मनुष्यों का एक बार के भोजन से पालन होता है।

अव उसके बच्चा-बच्ची मध्यभाग से २४ चौबीस हुए, क्योंकि कोई न्यून-से-न्यून एक और कोई अधिक-से-अधिक तीन बच्चों से ब्याती है। उनमें से दो का अलपमृत्यु समझो, रहे २२ बाईस, उमें से १२ बकरियों के दूध से २५,१२० पच्चीस हज़ार नवसौ बीस मनुष्यों का एक दिन पालन होता है। उसकी पीढ़ी-पर-पीढ़ी के हिसाब लगाने से असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है और बकरे भी बोझ उठाने आदि प्रयोजनों में आते हैं और बकरा-बकरी और भेड़-भेड़ी के ऊन के वस्त्रों से मनुष्यों को बड़े-बड़े सुख-लाभ होते हैं। यद्यपि भेड़ी का दूध बकरी के दूध से कुछ कम होता है, तथापि बकरी के दूध से उसके दूध में बल और घृत अधिक होता है। इसी प्रकार अन्य दूध देनेवाले पशुओं के दूध से भी अनेक प्रकार के सुख-लाभ होते हैं

जैसे ऊँट-ऊँटनी से लाभ होते हैं, वैसे ही घोड़े-घोड़ी और हाथी आदि से अधिक कार्य सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार सुअर, कुत्ता, मुर्गा, मुर्गी और मोर आदि पक्षियों से भी अनेक उपकार होते हैं। जो पुरुष हरिण और सिंह आदि पशु और मोर आदि पक्षियों से भी उपकार लेना चाहें तो ले-सकते हैं, परन्तु सबका पालन उत्तरोत्तर समयानुकूल होवेगा। वर्तमान में परमोपकारक गौ की रक्षा में मुख्य तात्पर्य है। दो ही प्रकार से मनुष्य आदि की प्राणरक्षा, जीवन, सुख, विद्या, बल और पुरुषार्थ आदि की वृद्धि होती है-एक अन्नपान, दूसरी आच्छादन। इनमें से प्रथम के बिना मनुष्यादि का सर्वथा प्रलय और दूसरे के बिना अनेक प्रकार की पीड़ा होती है।

देखिए, जो पशु निःसार घास, तृण, पत्ते, फल-फूल आदि खायें और सार दूध आदि अमृतरूपी रत्न देवें, हल-गाड़ी में चलके अनेकविध अन्न आदि उत्पन्न कर सबके बुद्धि, बल, पराक्रम को बढ़ाके नीरोगता करें, पुत्र-पुत्री और मित्र आदि के समान पुरुषों के साथ विश्वास और प्रेम करें, जहाँ बाँधे वहाँ बँधे रहें, जिधर चलायें उधर चलें, जहाँ से हटावें वहाँ से हट जावें, देखने और बुलाने पर समीप चले आवें, जब कभी व्याघ्रादि पशु व मारनेवाले को देखें अपनी रक्षा के लिए पालना करनेवाले के समीप दौड़कर आवें कि यह हमारी रक्षा करेगा। जिनके मरे पर चमड़ा भी कंटक आदि से रक्षा करे, जङ्गल में चरके अपने बच्चे और स्वामी के लिए दूध देने को नियत स्थान पर नियत समय चले आवें, अपने स्वामी की रक्षा के लिए तन-मन लगावें, जिनका सर्वस्व राजा और प्रजा आदि मनुष्यों के सुख के लिए हैं, इत्यादि शुभगुणयुक्त, सुखकारक पशुओं के गले छुरों से काटकर जो अपना पेट भर, सब संसार की हानि करते हैं क्या संसार में उनसे भी अधिक कोई विश्वासघाती, अनुपकारी, दुःख देनेवाले और पापीजन होंगे ?

इसीलिए यजुर्वेद के प्रथम ही मन्त्र में परमात्मा की आज्ञा है कि-'**यजमानस्य पशून् पाहि**' हे पुरुष ! तू इन पशुओं को कभी मत मार और यजमान, अर्थात् सबके सुख देनेवाले जनों के सम्बन्धी पशुओं की रक्षा कर, जिनसे तेरी भी पूरी रक्षा होवे और इसीलिए ब्रह्मा से लेके आज पर्यन्त आर्य लोग पशुओं की हिंसा में पाप और अधर्म समझते थे और अब भी समझते हैं और इनकी रक्षा में अन्न भी महंगा नहीं होता, क्योंकि दूध आदि के अधिक होने से दरिद्री को भी खान-पान में मिलने पर न्यून ही अन्न खाया जाता है और अन्न के कम खाने से मल भी कम होता है। मल के न्यून होने से दुर्गन्ध भी न्यून होती है, दुर्गन्ध के स्वल्प होने से वायु और वृष्टिजल की शुद्धि भी विशेष होती है। उससे रोगों की न्यूनता होने से सबको सुख बढ़ता है।

इससे यह ठीक है कि गो-आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का नाश हो जाता है, क्योंकि जब पशु न्यून होते हैं, तब दूध आदि पदार्थ और खेती आदि कार्यों की भी घटती होती है। देखो, इसी से जितने मूल्य से जितना दूध और घी आदि पदार्थ तथा बैल आदि पशु ७०० सात सौ वर्ष के पूर्व मिलते थे, उतना दूध-घी और बैल आदि पशु इस समय दशगुणे मूल्य से भी नहीं मिल सकते, क्योंकि ७०० सात सौ वर्ष के पीछे इस देश में गवादि पशुओं को मारनेवाले मांसाहारी विदेशी मनुष्य बहुत आ बसे हैं। वे उन सर्वोपकारी पशुओं के हाड़, मांस तक भी नहीं छोड़ते, तो '**नष्टे मूले नैव पत्रं न पुष्पम्**' जब कारण का नाश कर दे तो कार्य नष्ट क्यों न हो जावे ? हे मांसाहारियो ! तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात् पशु न मिलेंगे, तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं ? हे परमेश्वर ! तू क्यों इन पशुओं पर जोकि विना अपराध मारे जाते हैं, दया नहीं करता ? क्या उनपर तेरी प्रीति नहीं है ?

क्या उनके लिए तेरी न्यायसभा बन्द हो गई है ? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता और उनकी पुकार नहीं सुनता । क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया का प्रकाश कर निष्ठुरता, कठोरता, स्वार्थपन और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता ? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें ।

अथ समीक्षायां हिंसक-रक्षक-संवाद

हिंसक-ईश्वर ने सब पशु आदि सृष्टि मनुष्य के लिए रची है और मनुष्य अपनी भक्ति के लिए । इसलिए मांस खाने में दोष नहीं हो सकता ।

रक्षक-भाई ! सुनो, तुम्हारे शरीर को जिस ईश्वर ने बनाया है क्या उसी ने पशु आदि के शरीर नहीं बनाये हैं ? जो तुम कहो कि पशु आदि हमारे खाने को बनाये हैं, तो हम कह सकते हैं कि हिंसक पशुओं के लिए तुमको उसने रचा है, क्योंकि जैसे तुम्हारा चित्त उनके मांस पर चलता है, वैसे ही सिंह, गृध्र आदि का चित्त भी तुम्हारे मांस खाने पर चलता है, तो उनके लिए तुम क्यों नहीं ?

हिंसक-देखो, ईश्वर ने पुरुषों के दाँत कैसे मांसाहारी पशुओं के समान बनाये हैं । इससे हम जानते हैं कि मनुष्यों को मांस खाना उचित है ।

रक्षक-जिन व्याघ्रादि पशुओं के दाँत के दृष्टान्त से अपना पक्ष सिद्ध किया चाहते हो, क्या तुम भी उनके तुल्य ही हो ? देखो, तुम्हारी मनुष्यजाति उनकी पशुजाति, तुम्हारे दो पग और उनके चार, तुम विद्या पढ़कर सत्यासत्य का विवेक कर सकते हो, वे नहीं ! और यह तुम्हारा दृष्टान्त भी युक्त नहीं, क्योंकि जो दाँत का दृष्टान्त लेते हो तो बन्दर के दाँतों का दृष्टान्त क्यों नहीं लेते ? देखो ! बन्दरों के दाँत सिंह और बिल्ली आदि के समान हैं और वे मांस नहीं खाते । मनुष्य और बन्दर की आकृति भी बहुत-सी मिलती है, जैसे मनुष्यों के हाथ, पग और नख आदि होते हैं, वैसे ही बन्दरों के भी हैं । इसलिए परमेश्वर ने मनुष्यों को दृष्टान्त से उपदेश किया है कि जैसे बन्दर मांस कभी नहीं खाते और फलादि खाकर निर्वाह करते हैं, वैसे तुम भी किया करो । जैसा बन्दरों का दृष्टान्त साङ्गोपाङ्ग मनुष्यों के साथ घटता है, वैसा अन्य किसी का नहीं । इसलिए मनुष्यों को अति उचित है कि मांस खाना सर्वथा छोड़ देवें ।

हिंसक-देखो, जो मांसाहारी पशु और मनुष्य हैं वे बलवान् और जो मांस नहीं खाते हैं वे निर्बल होते हैं, इससे मांस खाना चाहिए

रक्षक-क्यों अल्प समझ की बातें मानकर कुछ भी विचार नहीं करते । देखो, सिंह मांस खाता और सुअर वा अरणा भैंसा मांस कभी नहीं खाता, परन्तु जो सिंह बहुत मनुष्यों के समुदाय में गिरे तो एक या दो को मारता और एक-दो गोली वा तलवार के प्रहार से मर भी जाता है और जब ज्गली सुअर वा अरणा भैंसा जिस प्राणिसमुदाय में गिरता है, तब अनेक सवारों और मनुष्यों की मारता और गोली बरछी तथा तलवार आदि के प्रहार से भी शीघ्र नहीं गिरता और सिंह उससे डरके अलग सटक जाता है और वह सिंह से नहीं डरता ।

और जो प्रत्यक्ष दृष्टान्त देखना चाहो तो एक मांसाहारी का, एक दूध, घी और अन्नाहारी मथुरा के मल्ल चौबे से बाहुयुद्ध हो तो अनुमान है कि चौबा मांसाहारी को पटक उसकी छाती पर चढ़ ही बैठेगा । पुनः परीक्षा होगी कि किस-किसके खाने से बल न्यून और अधिक होता है । भला, तनिक विचार करो कि छिलकों के खाने से अधिक बल होता है अथवा रस जो सार है उसके खाने से ? मांस छिलके के समान और दूध, घी और रस सार के तुल्य हैं, इसको जो युक्तिपूर्वक खावे तो मांस से अधिक गुण और बलकारी होता है फिर मांस का खाना व्यर्थ और हानिकारक, अन्याय अधर्म और दुष्टकर्म क्यों नहीं ?

हिंसक-जिस देश में सिवाय मांस के अन्य कुछ नहीं मिलता, वहाँ वा आपत्काल में अथवा रोगनिवृत्ति के लिए मांस खाने में दोष नहीं होता ।

रक्षक-यह आपका कहना व्यर्थ है, क्योंकि जहाँ मनुष्य रहते हैं, वहाँ पृथिवी अवश्य होती है । जहाँ पृथिवी है वहाँ खेती वा फल, फूल आदि होते हैं और जहाँ कुछ भी नहीं होता वहाँ मनुष्य भी नहीं रह सकते और जहाँ उसर भूमि है, मिष्ट जल और फलाहारादि के न होने से मनुष्यों का रहना भी दुर्घट है और आपत्काल में भी अन्य उपायों से निर्वाह कर सकते हैं, जैसे मांस न खानेवाले करते हैं और बिना मांस के रोगों का निवारण भी ओषधियों से यथावत् होता है, इसीलिए मांस खाना अच्छा नहीं ।

हिंसक-जो कोई भी मांस न खावे तो पशु इतने बढ़ जाएँ की पृथिवी पर भी न समावें और इसीलिए ईश्वर ने उनकी उत्पत्ति भी आधिक की है, तो मांस क्यों न खाना चाहिए ?

रक्षक-वाह ! वाह !! वाह !!! बुद्धि का विपर्यास आपको मांसाहार ही से हुआ होगा । देखो मनुष्य का मांस कोई नहीं खाता, पुनः क्यों न बढ़ गये और इनकी अधिक उत्पत्ति इसलिए है कि ऐक मनुष्य के पालन-व्यवहार में अनेक पशुओं की अपेक्षा है । इसलिए ईश्वर ने उनको अधिक उत्पन्न किया है ।

हिंसक-ये जितने प्रश्न-उत्तर किये वे सब व्यवहार-सम्बन्धी हैं, परन्तु पशुओं को मारके खाने में अधर्म तो नहीं होता और जो होता है तो तुमको होता होगा, क्योंकि तुम्हारे मत में निषेध है । इसलिए तुम मत खाओ और हम खावें, क्योंकि हमारे मत में मांस खाना अधर्म नहीं है ।

रक्षक-हम तुमसे पूछते हैं कि धर्म और अधर्म व्यवहार ही में होते हैं वा अन्यत्र ? तुम कभी सिद्ध न कर सकोगे कि व्यवहार से भिन्न धर्मादर्म होते हैं । जिस-जिस व्यवहार से दूसरों की हानि हो वह 'अधर्म' और जिस-जिस व्यवहार से उपकार हो, वह-वह 'धर्म' कहता है । तो लाखों के सुख-लाभकारक पशुओं का नाश करना अधर्म और उनकी रक्षा से लाखों को सुख पहुँचाना धर्म क्यों नहीं मानते ? देखो, चोरी-जारी आदि कर्म इसीलिए अधर्म है कि इनसे दूसरे की हानि होती है । नहीं तो जो-जो प्रयोजन धनादि से उनके स्वामी सिद्ध करते हैं, वे ही प्रयोजन उन चोरादि के भी सिद्ध होते हैं । इसलिए यह निश्चित है कि जो-जो कर्म जगत् में हानिकारक हैं वे-वे 'अधर्म' और जो-जो परोपकारक हैं वे-वे 'धर्म' कहाते हैं ।

जब एक आदमी को हानि करने से चोरी आदि कर्म पाप में गिनते हो, तो गवादि पशुओं को मारके बहुतों की हानि करना महापाप क्यों नहीं ? देखो, मांसाहारी मनुष्यों में दया आदि उत्तम गुण होते ही नहीं, किन्तु वे स्वार्थवश होकर दूसरे की हानि करके अपना प्रयोजन सिद्ध करने ही में सदा रहते हैं । जब मांसाहारी किसी पुष्ट पशु को देखता है तभी उसकी इच्छा होती है कि इसमें मांस

अधिक हैं, मारके खाऊँ तो अच्छा हो और जब मांस का न खानेवाला उसको देखता है तो प्रसन्न होता है कि यह पशु आनन्द में है। जैसे सिंह आदि मांसाहारी पशु किसी का उपकार तो नहीं करते, किन्तु अपने स्वार्थ के लिए दूसरे का प्राण भी ले मांस खाकर अतिप्रसन्न होते हैं, वैसे मांसाहारी मनुष्य भी होते हैं। इसलिए मांस का खाना किसी मनुष्य को उचित नहीं।

हिंसक-अच्छा जो यही वात है तो जब तक पशु काम में आवें तब तक उनका मांस न खाना चाहिए, जब बूढ़े हो जावें वा मर जावें तब खाने में कुछ भी दोष नहीं।

रक्षक-जैसा दोष उपकार करनेवाले माता-पिता आदि को वृद्धावस्था में मारने और उनके मांस खाने में है, वैसा उन पशुओं की सेवा न कर मारके मांस खाने में है और जो मरे पश्चात् उनका मांस खावे तो उसका स्वभाव मांसाहारी होने से अवश्य हिंसक होके हिंसारूपी पाप से कभी न बच सकेगा। इसलिए किसी अवस्था में मांस न खाना चाहिए।

हिंसक-जिन पशुओं और पक्षियों अर्थात् जङ्गल में रहनेवालों से उपकार किसी का नहीं होता और हानि है, उनका मांस खाना वा नहीं ?

रक्षक-न खाना चाहिए, क्योंकि वे भी उपकार में आ सकते हैं। देखो, १०० भङ्गी (सफ़ाई कर्मचारी) जितनी शुद्धि करते हैं, उनसे अधिक एक सुअर वा मुर्गा अथवा मोर आदि पक्षी सर्प आदि की निवृत्ति करने से पवित्रता और अनेक उपकार करते हैं और जैसे मनुष्यों का खान-पान दूसरे के खाने-पीने से उनका जितना अनुपकार होता है, वैसे जङ्ली मांसाहारी का अन्न जङ्ली पशु और पक्षी हैं और जो विद्या वा विचार से सिंह आदि वनस्थ पशु और पक्षियों से उपकार लेवें तो अनेक प्रकार का लाभ उनसे भी हो सकता है। इस कारण मांसाहार का सर्वथा निषेध होना चाहिए।

भला ! जिनके दूध आदि खाने-पीने में आते हैं, वे माता-पिता के समान माननीय क्यों न होने चाहिएँ ? ईश्वर की सृष्टि से भी विदित होता है कि मनुष्यों से पशु और पक्षी आदि अधिक रहने से कल्याण है, क्योंकि ईश्वर ने मनुष्यों के खाने-पीने के पदार्थों से भी पशु-पक्षियों के खाने-पीने के पदार्थ घास, वृक्ष, फूल, फलादि आधिक रचे हैं और वे बिना जोते, बोये, सींचे, पृथिवी पर स्वयं उत्पन्न होते हैं और (ईश्वर) वहाँ वृष्टि भी करता है, इसलिए समझ लीजिए कि ईश्वर का अभिप्राय उनके मारने में नहीं, किन्तु रक्षा करने में है।

हिंसक-जो मनुष्य पशु को मारके मांस खावें उनको पाप होता हैं और जो बिकता मांस मूल्य से ले वा भैरव, चामुण्डा, दुर्गा, जखैया, वाममार्ग अथवा यज्ञ आदि की रीति से चढ़ा समर्पण कर खावें तो उनको पाप नहीं होना चाहिए, क्योंकि वे विधि करके खाते हैं

रक्षक-जो कोई मांस न खावे न उपदेश और न अनुमति आदि देवे तो पशु आदि कभी न मारे जावें, क्योंकि इस व्यवहार में बहकावट, लाभ और <u>विक्री</u> न हो, तो प्राणियों का मारना बन्द ही हो जावे। इसमें प्रमाण भी है-

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्त्ता चोपहर्त्ता च खादकश्चेति घातकाः

-मनु० अ० ५ श्लो० ५१

अर्थ-अनुमति-मारने की सलाह देने, मांस के काटने, पशु आदि के मारने, उनको मारने के लिए लेने और बेचने, मांस के पकाने, परसने और खानेवाले आठ मनुष्य घातक-हिंसक अर्थात् ये सब पापकारी हैं।

और भैरव आदि के निमित्त से भी मांस खाना, मारना वा मरवाना महापापकर्म है। इसलिए दयालु परमेश्वर ने वेदों में मांस खाने वा पशु आदि के मारने की विधि नहीं लिखी।

मद्य भी मांस खाने का ही कारण है, इसीलिए यहाँ संक्षेप से लिखते हैं-

प्रमत्त-कहोजी ! मांस तो छूटा, परन्तु मद्य पीने में तो कोई भी दोष नहीं ?

शान्त-मद्य पीने में भी वैसे ही दोष हैं जैसेकि मांस खाने में। मनुष्य मद्य पीने से नशे के कारण नष्टबुद्धि होकर अकर्तव्य कर लेता और कर्तव्य को छोड़ देता है, न्याय का अन्याय और अन्याय का न्याय आदि विपरीत कर्म करता है और मद्य की उत्पत्ति विकृत पदार्थों से होती है और वह मांसाहारी अवश्य हो जाता है, इसलिए इसके पीने से आत्मा में विकार उत्पन्न होते हैं और जो मद्य पीता है, वह विद्यादि शुभ-गुणों से रहित होकर उन दोषों में फँसकर अपने धर्म, अर्थ, और मोक्ष फलों को छोड़ पशुवत् आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि कर्मों में प्रवृत्त होकर अपने मनुष्यजन्म को व्यर्थ कर देता है। इसलिए नशा अर्थात् मदकारक द्रव्यों का सेवन भी न करना चाहिए।

जैसा मद्य है वैसे भांग आदि पदार्थ भी मादक है, इसलिए इनका भी सेवन कभी न करे, क्योंकि ये भी बुद्धि का नाश करके प्रमाद, आलस्य और हिंसा आदि में मनुष्य को लगा देते हैं। इसलिए मद्यपान के समान इनका भी सर्वथा निषेध ही है।

इससे हे धार्मिक सज्जन लोगो ! आप इन पशुओं की रक्षा तन, मन और धन से क्यों नहीं करते ? हाय ! बड़े शोक की बात है कि जब हिंसक लोग गाय, बकरे आदि पशुओं को मारने के लिए ले-जाते हैं, तब वे अनाथ तुम-हमको देखके राजा और प्रजा पर बड़े शोक प्रकाशित करते हैं कि देखो ! हमको देखके राजा और प्रजा पर बड़े शोक प्रकाशित करते हैं कि देखो ! हमको बिना अपराध बुरे हाल से मारते हैं और हम रक्षा करने तथा मारनेवालों को भी दूध आदि अमृत पदार्थ देने के लिए उपस्थित रहना चाहते हैं और मारे जाना नहीं चाहते। देखो ! हम पशुओं का सर्वस्व परोपकार के लिए है और हम इसीलिए पुकारते हैं कि हमको आप लोग बचावें, हम तुम्हारी भाषा में अपना दुःख नहीं समझा सकते और आप लोग हमारी भाषा नहीं जानते, नहीं तो क्या हममें से किसी को कोई मारता तो हम भी आप लोगों के सदृश्य अपने मारनेवालों को न्याय-व्यवस्था से फाँसी पर न चढ़वा देते ? हम इस समय अतीव कष्ट में हैं, क्योंकि कोई भी हमको बचाने में उद्यत नहीं होता और जो कोई होता है तो उससे मांसाहारी द्वेष करते हैं। अस्तु, वे स्वार्थ के लिए द्वेष करो तो करो, क्योंकि **'स्वार्थी दोषं न पशयति'** जो स्वार्थ साधने में तत्पर है, वह अपने दोषों पर ध्यान नहीं देता, किन्तु दूसरों को हानि हो तो हो मुझको सुख होना चाहिए, परन्तु जो उपकारी हैं वे इनके बचाने में अत्यन्त पुरुषार्थ करें, जैसाकि आर्य लोग सृष्टि के आरम्भ से आज तक वेदोक्त रीति से प्रशंसनीय कर्म करते आये हैं, वैसे ही सब भूगोलस्थ सज्जन मनुष्यों को करना उचित है।

धन्य है आर्यावर्त देशवासी आर्य लोगों को कि जिन्होंने ईश्वर के सृष्टिक्रम के अनुसार परोपकार में ही अपना तन, मन, धन लगाया और लगाते हैं, इसीलिए आर्यावर्तीय राजा, महाराजा, प्रधान और धनाढय लोग आधी पृथिवी में अङ्गल रखते थे कि जिससे पशु और पक्षियों की रक्षा होकर ओषधियों के सार दूध आदि पवित्र पदार्थ उत्पन्न हों, जिनके खाने-पीने से आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम आदि सद्गुण बढ़ें और वृक्षों के अधिक होने से वर्षाजल और वायु में आर्द्रता और शुद्धि अधिक होती है । पशु और पक्षी आदि के अधिक होने से खात भी अधिक होता है, परन्तु इस समय के मनुष्यों का इससे विपरीत व्यवहार है कि जङ्गलों को काट और कटवा डालना, पशुओं को मार और मरवा खाना और विष्ठा आदि का खात खेतों में डाल अथवा डलवाकर रोगों की वृद्धि करके संसार का अहित करना, स्वप्रयोजन साधना और पर-प्रयोजन पर ध्यान न देना इत्यादि काम उलटे हैं ।

'विषादप्यमृतं ग्राह्यम्' स्तपुरुषों का यही सिद्धान्त है कि विष से भी अमृत लेना । इसी प्रकार गाय आदि के विषवत्, महारोगकारी मांस को छोड़कर उनसे उत्पन्न हुए दूध आदि अमृत रोगनाशक हैं उनको लेना । अतणव इनकी रक्षा करके विषत्यागी और अमृतभोजी सबको होना चाहिए । सुनों बन्धुवर्गो ! तुम्हारा तन, मन, धन गाय आदि की रक्षारूप परोपकार में न लगे तो किस काम का है ? देखो, परमात्मा का स्वभाव कि जिसने विश्व और सब पदार्थ परोपकार ही के लिए रच रक्खे हैं, वैसे तुम भी अपना तन, मन, धन परोपकार ही के अर्पण करो ।

बड़े आश्चर्य की बात है कि पशुओं को पीड़ा न होने के लिए न्यायपुस्तक में व्यवस्था भी लिखी है कि जो पशु दुर्वलं और रोगी हों उनको कष्ट न दिया जावे और जितना बोझ सुखपूर्वक उठा सकें उतना ही उनपर धरा जावे । श्रीमती राजराजेश्वरी श्रीविक्टोरिया महाराणी का विज्ञापन भी प्रसिद्ध है कि इन पशुओं को जो-जो दुःख दिया जाता है वह न दिया जावे, तो क्या भला मार डालने से भी अधिक कोई दुःख होता है ? क्या फाँसी से अधिक दुःख बन्दीगृह में होता है ? जिस किसी अपराधी से पूछा जाए कि तू फाँसी चढ़ने में प्रसन्न है वा बन्दीघर के रहने में ? तो वह स्पष्ट कहेगा कि फाँसी में नहीं, किन्तु बन्दीघर के रहने में ।

और जो कोई मनुष्य भोजन को उपस्थित हो, उसके आगे से भोजन के पदार्थ उठा लिये जावें और उसको वहाँ से दूर किया जावे, तो क्या वह सुख मानेगा ? ऐसे ही आजकल के समय में कोई गाय आदि पशु सरकारी जङ्गल में जाकर घास और पत्ता जोकि उन्हीं के भोजनार्थ हैं बिना महसूल दिये खावें वा खाने को जावें, तो बेचारे उन पशुओं और उनके स्वामियों की दुर्दशा होती है । जङ्गल में आग लग जावे तो कुछ चिन्ता नहीं, किन्तु वे पशु न खाने पावें । हम कहते हैं कि किसी अति सुधातुर राजा वा राजपुरुष के सामने आयो चावल आदि वा डबलरोटी आदि छीनकर न खाने देवें और उनकी दुर्दशा की जावे, तो इनको दुःख विदित न होगा क्या ? वैसा ही उन पशु-पक्षियों और उनके स्वामियों को न होता होगा ?

ध्यान देकर सुनिए कि जैसा दुःख सुख अपने को होता है, वैसा ही औरों को भी समझा कीजिए और यह भी ध्यान में रखिए कि वे पशु आदि और उनके स्वामी तथा खेती आदि कर्म करनेवाले प्रजा के पशु आदि और मनुष्यों के अधिक पुरुषार्थ ही से राजा का ऐश्वर्य अधिक बढ़ता और न्यून होने से नष्ट हो जाता है, इसीलिए राजा प्रजा से कर लेता है कि उनकी रक्षा यथावत् करे, न कि राजा और प्रजा के जो सुख के कारण गाय आदि पशु हैं उनका नाश किया जावे । इसलिए आज तक जो हुआ सो हुआ, आगे आँखें खोलकर सबके हानिकारक कर्मों को न कीजिए और न करने दीजिए । हाँ, हम लोगों का यही काम है कि आप लोगों को भलाई और बुराई के कामों को जता देवें और आप लोगों का यही काम है कि पक्षपात छोड़ सबकी रक्षा और वढ़ती करने में तत्पर रहें । सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर हम और आपपर पूर्ण कृपा करें कि जिससे हम और आप लोग विश्व के हानिकारक कर्मों को छोड़ सर्वोपकारक कर्मों को करके सब लोग आनन्द में रहें । इन सब बातों को सुन मत डालना, किन्तु सुन रखना, इन अनाथ पशुओं के प्राणों को शीघ्र बचाना

हे महाराजाधिराज जगदीश्वर ! जो इनको कोई न बचावे तो आप इनकी रक्षा करने और हमसे कराने में शीघ्र उद्यत हूजिए

इति समीक्षा-प्रकरणम ।

...पृ. ५ का शेष

बिना पानी डाले बिलोया हुआ 'मथित' कहाता है

३. मट्ठा-जिसे एक चौथाई भाग पानी डालकर मथा जाए वह तक्र अथवा मट्ठा कहलाता है ।

४. उदश्वित्-आधा पानी डालकर मथा हुआ दही 'उदश्वित' कहाता है ।

५. छाच या छच्छिका-जिस दही को मथकर मक्खन निकाल लिया गया हो और काफी पानी डाला गया हो, उसे 'छाछ या छच्छिका' कहते हैं ।

२५. गाय का गोबर और मूत्र मनुष्य के त्वचा रोगों के उपचार में विशेष उपयोगी है। गाय के गोबर का काम करनेवाले के हाथों में खुजली, दाद और एग्ज़िमा-जैसे रोग कभी नहीं होते । गाय के गोबर में दुर्गन्ध तो होती ही नहीं, उससे लिपे स्थान पर कीटाणु, मक्खी, मच्छर आदि नहीं आते । वस्तुतः आयुर्वेद के ग्रन्थों में गाय के दूध आदि से होनेवाले रोगों का उपचार-सम्बन्धी जो ज्ञान बीजरूप में उपलब्ध है उसका विधिवत् विकास होने पर चिकित्सा की ऐसी विधियाँ निकल सकती हैं जिनका अभी तक मूल्यांकन नहीं हो पाया है

लाख दुःखों की एक दवा-गोदूध का मट्ठा-छाछ दही को मथकर मक्खन निकाला गया पौष्टिक पैय 'मद्ठा' कहलाता है । यह सभी के लिए प्रायः समानरूप से हितकारी होता है। इसका उपयोग गाँवों में अतिप्राचीन काल से होता आया है । आयुर्वेद के प्रवर्तक आचार्य धन्वन्तरि के अनुसार इसकी नौ किस्में होती हैं-मथित, गोरस, घोल, द्रव, विलोडित, श्वेत, दंडाहत, तक्र तथा छाछ ।

इनमें सर्वोत्तम मट्ठा गाय के दही से तैयार होता है जिसकी तासीर दही की कोटि पर निर्भर करती है । इसमें विद्यमान लैक्टिक नाम के जीवाणु के कारण शरीर में रोग-प्रतिरोधन क्षमता बढ़ती है, जिससे लोग स्वस्थ और दीर्घायु रहते हैं । बूरा (शक्कर) के साथ तो इसका सेवन उत्तम पाचक सिद्ध होता है। इसके नियमित उपयोग से आँखों की ज्योति, दाँतों की मजबूती आदि यथावत् रहती है, साथ ही यह अरुचि, पोलियो, मंदाग्नि, उलटी, वात, बवासीर, रक्तचाप, संग्रहणी, वायुगोला, अतिसार, प्रमेह, रक्तसंचार, कोढ़, पेट की गड़बड़ी, पेटदर्द, तिल्ली, प्लीहा, मोटापा, मूत्ररोग, प्यास इत्यादि में भी गुणकारी है ।

मेरे पिता : संस्मरण
जब मैंने होश सम्भाला

जब मैंने होश सम्भाला, तब मैं अपनी तायी जी की गोद में पल रहा था । मैं अभी दो वर्ष का हो था, कि मेरी प्रात-स्मरणीया माता का देहान्त हो गया । उन का नाम 'शिवदेवी' था । जब माता का देहान्त हुआ तब हम चारों भाई बहिन छोटे-छोटे थे । सब से बड़ी बहिन वेदकुमारी जी आठ वर्ष की थीं । उन से छोटी हेमकुमारी (पंजाबी में हेमकौर) छह वर्ष की थीं, और हरिश्चन्द्र चार वर्ष के थे । मैं दो वर्ष का था और रोगी था ।

माता जी ह;;म सब को इस तरह छोड़ कर चली गई, तो पिता जी के सामना बड़ा विकट प्रश्न खड़ा हो गया । उन की आयु उस समय छत्तीस वर्ष की थी । पिताजी के तीन बड़े भाई थे । उन में से सब से छोटे भाई की पत्नी हमारी माता जी से बहुत प्रेम करती थीं । माता जी की मृत्यु के समय वह जालन्धर में ही थीं । माता जी ने मृत्यु से पूर्व हमारे हाथ तायी जी के हाथ में देते हुए कह दिया था कि, 'बहिन जी मैं इन्हें आप के सुपुर्द करती हूँ ।' तायी जी के अपनी कोई सन्तान नहीं थी । उन्होंने पूरे मातृभाव से हम लोगों को अपनी गोद में ले लिया । मैं सब से छोटा था, इस कारण मुझे उन की गोद की अन्य सब भाई बहिनों से अधिक आवश्यकता थी । वह गोद मुझे मिल गई । यही कारण है कि जब मैंने कुछ होश सम्भाला, तब अपने आपको तायी जी की गोद में पाया । तायी जी का नाम 'जमुनादेवी' था । ताया जी का नाम आत्माराम था । माता जी की मृत्यु के पीछे वे दोनों जालन्धर में ही रहने लगे थे ।

मैं बचपन में बहुत बीमार रहा । इस से तायी जी ने मेरे लिये बहुत कष्ट उठाए और इसी लिए उन का मेरे साथ वात्सल्य भी बहुत था । वस्तुतः वह वात्सल्य मोह की दशा तक पहुँच गया था ।

मैने जिस घर में होश सम्भाला, उस की कुछ चर्चा करना भी आवश्यक है । हमारे पूर्वपुरुष जालन्धर से लगभग बीस-बाईस

मील दूरी पर तलवन ग्राम के निवासी थे । हमारे दादा जी ने यू० पी० में पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट की नौकरी से पेन्शन लेकर तलवन में मकान, मन्दिर आदि बनवाए थे। मुझ से बड़े भाई बहिनों का जन्म तलवन में ही हुआ था । जब पिता जी ने वकालत करना आरम्भ कर दिया, तब परिवार जालन्धर आ गया, और कचहरी के पास एक किराए के मकान में रहने लगा । मेरा जन्म उस कचहरीवाले मकान में हुआ था ।

जालन्धर में आने के कुछ समय पश्चात्, पिता जी ने होशियारपुर के अड्डे के पास, अपनी कोठी बनानी आरंभ कर दी थी । कोठी का स्थान बहुत खुला था, और मुख्य सड़क के किनारे होने से सुविधाजनक था। जब मैं होश में आया, तब हम होशियारपुर की सड़क वाली कोठी में पहुँच चुके थे । पिता जी को स्वभाव से ही किशाल योजना बनाने का शौक था, यह बत उस कोठी की रचना से सिद्ध होती थी ।

कोठी का नक्शा किले के ढंग का बनाया गया था । सड़क की ओर जो दीवार थी, उस के दोनों और कोनों पर गोलाई लिए हुए बुर्ज थे । दीवार के मध्य में बड़ा फाटक था । फाटक के अन्दर दाईं ओर अस्तबल था । अस्तबल में दो गाड़ियाँ, एक गाड़ी का घोड़ा, एक सवारी का घोड़ा, और प्रायः दो गौएँ रहती थीं । एक बन्द गाड़ी थी जो उस समय का फैशन था । उस समय की गाड़ियों का प्रचार अब बहुत कम हो गया है, क्योंकि पर्दे की प्रथा नष्ट होती जाती है। दूसरी गाड़ी गिग कहलाती थी, जिसे आजकल की बेबी कार का पूर्व-रूप समझना चाहिये । उसे प्रायः मालिक स्वयं चलाता था । उस के पास एक साथी के बैठने की जगह रहती थी । दायें हाथ पर एक शानदार बाबुक लगा रहता था । साईस के लिए पीछे की ओर खड़ा होने का एक पायदान लगा रहता था । पिता जी कचहरी उसी में जाते थे । बन्द गाड़ी परिवार के काम आती थी । हमारे साईस का नाम नबीबक्श था। वह बहुत ही निष्टभाषी और फरमाबरदार नौकर था ।

फाटक के दूसरी ओर सद्धर्म-प्रचारक प्रेस और अखबाऱ का कार्यालय था । उस समय साप्ताहिक सद्धर्म-प्रचारक उर्दू में निकलता था । वह पत्र पंजाब की आर्यसमाजों का मुख्य मिशनरी पत्र समझा जाता था । उस के अग्रलेख, धर्मोपदेश आदि पिता जी स्वयं लिखा करते थे । प्रेस के मैनेजर का नाम बस्तीराम था जो पुराने ढंग की मुशी श्रेणी का एक बढ़िया नमूता था । कान में कलम लगा कर और आधे नाक पर ऐनक जमा कर जब वह हिसाब लिखने या प्रूफ देखने का काम करता था, तब प्रतीत होता था कि वह भी प्रेस की मशीन का एक पुर्जा है । क्योंकि हाथ हिलाने के सिवा घंटों तक और कोई चेष्टा उस के शरीर में नहीं दिखाई देती थी ।

अस्तबल और प्रेस के बाद दूसरा बड़ा और सर्वथा बन्द होने वाला फाटक था, जिस में एक खिड़की थी । दिन में प्रायः वह खिड़की खुली रहती थी, रात के समय वह भी बन्द हो जाती थी ।

फाटक के अन्दर एक छोटी सी परन्तु बाँकी वाटिका थी । वाटिका का पिता जी को बहुत शौक था । वाटिका में एक हुआं था, जिस का पानी बहुत ठण्डा और स्वादु था । वाटिका में शौक की सभी चीजें थीं। घास का

मैदान था, फलों के पेड़ थे और सब्जियों की क्यारियाँ थीं। घास के मैदान के चारों ओर बहुत सुन्दर फुलवारी थी। फुलवारी से लगता हुआ लम्बा चौड़ा पक्का चबूतरा था, जिस के पश्चात् तीन मुख्य कमरे थे, जिन में से एक बैठक, दूसरी दफ्तर और तीसरा शयनागार था। ये कमरे अन्य सब कमरों से ऊँचे और विशाल थे। इन की सजावट भी बहुत बढ़िया थी।

वाटिका से दूसरा रास्ता हवेली में जाता था, जिस की दो ड्योढ़ियाँ थीं। अन्दर की ड्योढ़ी दाएं बाएं दो ओर खुलती थी, दाएं ओर की ड्योढ़ी रसोई घर में, और बाईं ओर की हवेली में ले जाती थी।

हवेली का नक्शा यह था कि बीच में चौकोर आँगन था जिस के तीन ओर बड़े-बड़े कमरों की पंक्तियाँ बनी हुई थीं। यदि मैं भूलता नहीं तो प्रत्येक पंक्ति में कमरों की संख्या पांच से कम नहीं थी। कमरे काफी बड़े-बड़े थे, पूरी संख्या या पूरा नाप बताना कठिन है इकयोंकि मुझे उस कोठी को छोड़े इस समय (१६५६ में) लगभग उनसठ वर्ष हो गए। आज से दस वर्ष पहले एकबार उसे देखने का शौक दिल में उठा था। आजकल वह एक बिरादरी का जञ्जघर है। गया तो था बड़े शौक से, परन्तु द्वार में घुसते ही हृदय पर ऐसा धक्का लगा कि आगे जाने की हिम्मत न हुई। वाटिका के स्थान पर छोटी-छोटी कोठरियाँ बनाई गई थीं-जिन से पुराना सपना टूट सा गया और दुखी दिल लेकर वापिस आ गया। मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि पिता जी ने जिस भावना से, बड़े प्रेम से बनाई हुई वह कोठी गुरुकुल को दान दी थी, गुरुकुल की स्वामिनी सभा उस भावना से उस की रक्षा न कर सकी। यदि सभा उस कोठी की यथार्थ रूप में रक्षा करती, तो भारत के विभाजन के पश्चात् उसे कार्यालय के लि दर-दर का भिखारी न बनना पड़ता। उन्हें बना बनाया खूब शानदार कार्यालय मिल जाता। परन्तु सभा ने फूल को पतों के भाव बेच कर जहाँ भावना का तिरस्कार कर दिया, वहाँ अपनी भी हानि की। आवस्यकता होने पर उन्हें फूल तो क्या पत्ते भी न मिले।

-इन्द्र विद्यावाचस्पति

दे ोन्नति का मूल मन्त्र है ि क्षा। ि क्षा में वेद आधारित ई वर व जीवात्मा के स्वरूप व भास्त्रों के हितकारी उपदे ों का अनिवार्य अध्ययन। ऐसा करके दे । को संसार का आद ि दे । बनाया जा सकता है।

अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल का देशभक्ति से सराबोर तराना

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है।

रहबरे राहे मुहब्बत, रह न जाना राह में,
लज़्ज़ते-सेहरा नवर्दी दूरिए-मंजिल में है।

वक्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आसमा!
हम अभी से क्या बतायें, क्या हमारे दिल में है

अब न अगले वलवले हैं और न अरमानों की भीड़,
एक मिट जाने की हरसल, अब दिले-बिस्मिल में है

आज मकतल में ये कातिल कह रहा है बार-बार
क्या तमन्ना-ए-शहादत भी किसी के दिल में है।

ऐ शहीदे-मुल्को-मिल्लत ! तेरे जज़बों के निसार,
तेरी कुर्बानी की चर्चा, गैर की महफ़िल में है।

'महान आर्य संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द'

वैदिक धर्म एवं संस्कति के उन्नयन में स्वामी श्रद्धानन्द जी का महान योगदान है। उन्होंने अपना सारा जीवन इस कार्य के लिए समर्पित किया। वैदिक धर्म के सभी सिद्धान्तों को उन्होंने अपने जीवन में धारण किया था। दे   I भक्ति से सराबोर वह वि   व की प्रथम धर्म–संस्कति के मूल आधार ई   वरीय ज्ञान "वेद" के अद्वितीय प्रचारकों में से एक थे। ि   ाक्षा जगत, राश्टीय स्वतन्त्रता आन्दोलेलन, समाज व जाति सुधार, बिछुड़े हुए धर्म बन्धुओं की भुद्धि, दलितों के प्रति दया से भरा हृदय रखने वाले तथा उनकी रक्षा में तत्पर, आर्यसमाज के महान नेताओं में से एक, आद   ि सद्‌गहस्थी, कर्तव्य पालन में अपना सर्वस्व व प्राण समर्पित वाले अद्वितीय महापुरुरुश थे। उनका व्यक्तित्व ऐसा है कि जिसे जानकर प्रत्येक सात्विक हदय वाला व्यक्ति उनका अनुयायी बन जाता है। महर्शि दयानन्द के बाद आर्यसमाज और दे   I में उनके समान गुणों वाला व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ। प्रसिद्ध आर्य वैदिक संन्यासी स्वामी डा. सत्य प्रका   I सरस्वती ने उनसे सम्बन्धित अपने कुछ संस्मरणों को प्रस्तुत करने के साथ उनके कार्यों पर अपनी राय भी दी है। इसी पर आधारित हमारा यह लेख है।

सन् 1916 में भारतीय राश्ट्रीय कांग्रेस के अवसर पर लखनऊ में स्वामी सत्यप्रका   I सरस्वती ने महात्मा मुं   ीराम के द   ीन किए थे। 1914–15 में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत आये थे और जनता में गांधी जी की लोकप्रियता बढ़ रही थी। नरम दल के नेता कांग्रेस से अलग हो गए थे और उन्होंने अपनी आल इण्डिया लिबरल फैडरे   ान संघटित करना आरम्भ कर दिया था। गरम दल के व्यक्तियों के हृदय सम्राट् लोकमान्य तिलक जी थे। 8 अप्रैल,

स्वामी श्रद्धानन्द जी

1915 को गुरुकुल कांगडी में महात्मा मुं   ीराम के आश्रम में मिस्टर गांधी आये और "महात्मा" गांधी बन करके वहां से निकले। महात्मा मुं   ीराम जी ने ही गांधी जी को गुरुकुल में पधारने पर पहली बार उनको महात्मा भाब्द से सम्बोधित किया था, यह महात्मा भाब्द इसके बाद आजीवन उनके नाम के साथ जुड़ा रहा। यही गांधी जी के महात्मा गांधी बनने का इतिहास है। सन् 1916 की कांग्रेस में स्वामी सत्यप्रका   I जी ने गांधी जी और मुं   ीराम जी दोनों को राश्ट्रभाशा हिन्दी सम्बन्धी एक समारोह में देखा था। दोनों की वे   ाभूशा की रूपरेखा बराबर उनकी आंखों के समाने बनी रही, ऐसा उन्होंने अपने लेख में वर्णित किया है। तब वहां महात्मा मुं   ीराम जी भव्य दाढ़ी, सुदढ़ भारीर और गले के नीचे पीत वस्त्र तथा गांधी जी अपनी काठियावाड़ी पगड़ी, अंगरखा और नंगे पैर उपस्थित थे। इसके बाद स्वामी सत्यप्रका   I जी प्रयाग आ गये। वहां 'आर्यकुमार सभा' के उत्सव पर स्वामी श्रद्धानन्द जी आये थे और तब स्वामी सत्यप्रका   I जी ने उन्हें निकट से देखा। स्वामी श्रद्धानन्द जी को प्रयाग में नयी सड़क के एक दुमंजिले मकान में ठहराया गया था।

स्वामी सत्यप्रका   I जी ने यह भी वर्णन किया है कि 26 दिसम्बर 1919 को अमतसर कांग्रेस में स्वामी श्रद्धानन्द स्वागताध्यक्ष थे और पं. मोतीलाल नेहरू अध्यक्ष। किम्वदन्ती है कि दोनों ने एक–दूसरे को पहचाना––दोनों सहपाठी थे बनारस, इलाहाबाद, आगरा या बरेली में से किसी स्थान पर। महात्मा मुं   ीराम जी की प्रारम्भिक ि   ाक्षा बरेली में हुई, 1873 में उच्च ि   ाक्षा क्वीन्स कालेज बनारस में, 1880 और पुनः 1888 में कानूनी ि   ाक्षा लाहौर में। महात्मा मुं   ीराम जी का नाम श्रद्धानन्द संन्यास के बाद पड़ा। संन्यास उन्होंने 12 अप्रैल 1917 को मायापुर (कनखल) में लिया था। स्वामी सत्यप्रका   I जी सन् 1915–16 में इन्द्र विद्यावाचस्पति और पौराणिकों की बातें सुना करते थे, क्योंकि 1912–16 तक सनातन धर्म सभाओं की बड़ी धूम थी––ये सनातन धर्म सभाएं धीरे–धीरे निश्क्रिय हो गयीं।

स्वामी सत्यप्रका   I जी ने अपने संस्मरणों में बताया है कि सन् 1925 ई. में मथुरा में जो महर्शि दयानन्द जन्म भाताब्दी मनायी गयी थी उसके अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द थे––तब तक उनका स्वास्थ्य गिर चुका था और

महात्मा नारायण स्वामी जी वस्तुतः उस समारोह के कार्यकर्ता अध्यक्ष थे। आनन्द भवन में होने वाली कांग्रेस की बैठकों में 1922 ई. के बाद भी स्वामी जी इलाहाबाद कतिपय बार आये। 1921 ई. के अप्रैल मास में पं. मोतीलाल जी की पुत्री विजयलक्ष्मी के विवाह में भी स्वामी श्रद्धानन्द जी सम्मिलित हुए थे पर मोपला काण्ड (मालाबार, केरल) के बाद श्रद्धानन्द जी कांग्रेस से धीरे–धीरे अलग हो गये। स्वामी दयानन्द ने मत्यु के समय आर्यसमाज का नेतत्व किसी व्यक्ति के हाथ में नहीं छोड़ा था। ई वर के भरोसे मानों वे चल दिये। 1883 ई. के बाद स्वयं ही आर्यसमाज में 'व्यक्तियों' का प्रादुर्भाव हुआ। इन व्यक्तियों में श्रद्धानन्द का इतिहास ही आर्यसमाज का इतिहास है। इस युग के अन्य लोगों में महात्मा हंसराज, पं. गुरुदत्त, पं. लेखराम, लाला लाजपतराय, स्वामी द निानन्द और स्वामी नित्यानन्द का भी अभूतपूर्व व्यक्तित्व था।

स्वामी सत्यप्रका ा जी के अनुसार स्वामी श्रद्धानन्द ने इस भाती के प्रथम पाद में भारत के इतिहास में मार्मिक भूमिका निभायी। आर्यसमाज में दयानन्द के बाद श्रद्धानन्द–सा दूसरा व्यक्ति देखने में नही आया। स्वामी सत्यप्रका ा जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी की 1924 ई. में प्रकाि ात 'कल्याण–मार्ग का पथिक' आत्मकथा को पढा, उनके पास उनका और गुरुकुल कांगडी में श्रद्धानन्द जी सहयोगी आचार्य रामदेव जी द्वारा सम्पादित 'द आर्यसमाज एण्ड इट्स डिक्टैटर्स––ए विण्डिके ान' प्रसिद्ध ग्रन्थ था। 'दु:खी दिल की पुरदर्द दास्तान' उन्होंने नहीं पढ़ी। (उर्दू में लिखित यह ग्रन्थ आर्यसमाज के आन्तरिक विग्रह की कश्ट् कथा है। इसका अनुवाद हरिद्वार निवासी हिन्दी कवि श्री सुमन्त सिंह आर्य ने किया है जो प्रका ान की प्रतीक्षा में है। कुछ विद्वान इसमें समाहित आलोचनाओं के कारण इसके प्रका ान की आव यकता नहीं समझते। हमारी अनुवादक महोदय से भेंट हुई है। उन्होंने बताया कि यह ग्रन्थ उन्होंने प्रका ानार्थ आर्यविद्वान डा. महावीर अग्रवाल जी को दिया हुआ है।)। श्रद्धानन्द जी विशयक सबसे अधिक बातें स्वामी सत्यप्रका ा जी को स्वामी श्रद्धानन्द जी पर आस्ट्रेलियाई प्रो. जे. टी.एफजॉर्डन्स की पुस्तक से ज्ञात हुई।

स्वामी सत्यप्रका ा जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी पर कई टिप्पणियां की हैं। वह लिखते हैं कि गुरुकुल के अनगिनत स्नातकों के कुलगुरु महात्मा मुं ाीराम थे, न कि श्रद्धानन्द। मुं ाीराम और श्रद्धानन्द तो दो अलग व्यक्तित्व हैं। मुं ाीराम के रूप में वे महात्मा थे, गांधी के अत्यन्त निकट, गुरुकुलीय प्रणाली के उन्नायक, ि ाक्षा के क्षेत्र में अनन्य प्रयोगी तथा टैगोर की समकक्षता के ि ाक्षा ाास्त्री। दूसरा उनका स्वरूप स्वामी श्रद्धानन्द का रहा––सम्प्रदायवादिता मिश्रित राश्ट्र–उलझनों में फंसे हुए––कभी मालवीय के साथ, कभी महासभा के साथ, कभी उनसे दूर भागते हुए अत्यन्त विवादास्पद व्यक्तित्व, कभी–कभी निर्वाचनों की उलझनों में फंस जाने वाले व्यक्ति। उसका उन्हें पुरस्कार मिला––23 दिसम्बर, 1926 ई.. को सायंकाल 4 बजे दिल्ली में अब्दुल र ाीद की गोलियों से बलिदान । वे सदा के लिए अमर हो गए। अंग्रेजों की संगीनों के सामने छाती खोलकर खडा होने वाला वीर राश्ट्रभक्त संन्यासी श्रद्धानन्द का एक यह तेजस्वी रूप था। (महर्शि दयानन्द के बाद वैदिक धर्म के 7 मार्च, 1897 को एक विधर्मी आततायी द्वारा प्रथम भाहीद पण्डित) लेखराम की पंक्ति में खडा कर देने वाला ऋशि दयानन्द का असीम भक्त अमर भाहीद श्रद्धानन्द।

स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की और उसे अपने खून से सींचा। आज यह संस्था अपने मूल उद्दे य व गौरवपूर्ण अतीत से दूर हो चुकी है। यह स्थिति हमें कई बार पीड़ा देती है। 23 दिसम्बर को स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस है। अतः इस अवसर पर उनके पावन जीवन चरित्र का अध्ययन कर अपने जीवन को सुधारा व पुण्यकारी बनाया जा सकता है। धर्म की वेदी पर भाहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन चरित्र व उनके ग्रन्थों का अध्ययन कर ही उनको श्रद्धांजलि दी जा सकती है। स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रायः सभी ग्रन्थों को 'श्रद्धानन्द ग्रन्थावली' के नाम से लगभग 27 वर्श पूर्व 11 खण्डों में प्रकाि ात किया गया था। इसका नया भव्य एवं आकर्शक सस्करण दो खण्डों में 'विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, 4408 नई सड़क, दिल्ली' से इसी माह प्रकाि ात किया गया है। हम पाठकों को इसे मंगाकर पढ़ने की संस्तुति करते हैं। आईये, स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन व कार्यों को जानकर उनसे प्रेरणा ग्रहण करें और वैदिक धर्म व संस्कति की सेवा कर अपने जीवन को कतार्थ एवं सफल करें।

श्री पृथ्वी सिंह पूर्व उपप्रधान आर्य समाज ध्रुवपेट का २५-१२-२०१५ के दिन निर्धन

श्री पृथ्वीसिंह जी आर्य समाज ध्रुवपेट के उपप्रधान थे । धूलपेट के दि. २५-१२-२०१५ के ऐतिहासिक दंगों (१९३८-३९) में अपने पिता सूरजसिंह के साथ सशस्त्र क्रान्ति में भाग हिलये । तत्पश्चात् पोलिसकी नौकरी किये और सबइन्सपेक्टर पर से सेवा निवृत्तहुन सेवानिवृत्ति के बाद आर्य समाज ध्रुवपेट के कार्यक्रमों को उत्साह पूर्वक निभाते रहे ।

आर्य समाज ध्रुवपेट की ओर से दिवगंत आत्मा की शान्ति के लिये दि. २७-१२-२०१५ को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी ।

सरफ़रोशी की तमन्ना

आत्म-चरित्र

तोमरघर में चम्बल नदी के किनारे पर दो ग्राम आबाद हैं, जो ग्वालियर राज्य में बहुत ही प्रसिद्ध हैं, क्योंकि इन ग्रामों के निवासी बड़े उद्दण्ड हैं। वे राज्य की सत्ता की कोई चिन्ता नहीं करते। जमीदारों का यह हाल है कि जिस साल उनके मन में आता है राज्य को भूमि-कर देते हैं और जिस साल उनकी इच्छा नहीं होती, मालगुजारी देने से साफ इन्कार कर जाते हैं। यदि तहसीलदार या कोई और राज्य का अधिकारी आता है तो ये जमींदार बीहड़ में चले जाते और महीनों बीहड़ों में ही पड़े रहते हैं। उनके पशु भी वहीं रहते हैं और योजनादि भी बीहड़ों में ही होता है। घर पर कोई ऐसा मूल्यवान पदार्थ नहीं छोड़ते, जिसे नीलाम करके मालगुजारी वसूल की जा सके। एक जमींदार के सम्बन्ध में कथा प्रचलित है कि मालगुजारी न देने के कारण ही उनको कुछ भूमि माफी में मिल गई। पहले तो कई साल तक भागे रहे। एक बार धोखे से पकड़ लिए गए तो तहसील के अधिकारियों ने उन्हें बहुत सताया। कई दिन तक बिना खाना-पानी के बँधा रहने दिया। अंन्त में जलाने की धमकी दे, पैरों पर सूखी घास डालकर आग लगवा दी। किन्तु उन जमींदार महोदय ने भूमि-कर देना स्वीकार किया और यही उत्तर दिया कि ग्वालियर महाराज के कोष में मेरे कर न देने से ही घाटा न पड़ जाएगा। संसार क्या जानेगा कि अमुक व्यक्ति उद्दण्डता के कारण ही अपना समय व्यतीत करता है। राज्य को लिखा गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि उतनी भूमि उन महाशय को माफी में दे दी गई। इसी प्रकार एक समय इन ग्रामों के नवासिों को एक अद्भुत खेल सूझा। उन्होंने महाराज के रिसाले के साठ ऊँट चुराकर बीहड़ो में छिपा दिए। राज्य को लिखा गया, जिस पर राज्य की ओर से आज्ञा हुई कि दोनो ग्राम तोप लगाकर उड़वा दिए जाएँ। न जाने किस प्रकार समझाने-बुझाने से वे ऊँट वापस किए गए और अधिकारियों को समझाया गया कि इतने बड़े राज्य में थोड़े से वीर लोगों का निवास है, इनका विध्वंस न करना ही उचित होगा। तब तोपें लौटाई गई और ग्राम उड़ाये जाने से बचे। ये लोग अब राज्य-निवासियों को तो अधिक नहीं सताते, किन्तु बहुधा अंग्रेजी राज्य में आकर उपद्रव कर जाते हैं और अमीरों के मकानों पर छापा मारकर रात-ही-रात बीहड़ में दाखिल हो जाते हैं। बीहड़ में पहुँच जाने पर पुलिस या फौज कोई भी उनका बाल बाँका नहीं कर सकती। ये दोनों ग्राम अंग्रेजी राज्य की समा से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर चम्बल नदी के तट पर हैं। यही के एक प्रसिद्ध वंश में मेरे पितामह श्री नारायणलाल जी का जन्म हुआ था। वह कौदुम्बिक कहल और अपनी भाभी के असहनीय दुर्व्यवहार के कारण मजबूर हो अपनी जनमभूमि छोड़ उधर-उधर भटकते रहे। अन्त में अपनी धर्मपत्नी और दो पुत्रों के साथ वह शाहजहाँपुर पहुँचे। उनके इइही दो पुतरों में ज्येष्ठ पुत्र श्री मुरलीधर जी मेरे पिता हैं। उस समय इनकी अवस्था आठ वर्ष और उनके छोटे पुत्र-मेरे चाचा (श्री कल्याणमल) की उम्र छः वर्ष की थी। इस समय यहां दुर्भिक्ष का भयंकर प्रकोप था।

दुर्दिन

अनेक प्रयत्न करने के पश्चात् शाहजहाँपुर में एक अत्तार महोदय की दुकान पर शीयुत नारायणलाल जी को तीन रुपये मासिक वेतन की नौकरी मिली। तीन पुपये मासिक के दुर्भिक्ष के समय चार प्राणियों का किस प्रकार निर्वाह हो सकता था दादाजी ने बहुत प्रयत्न किया कि अपने आप केवल एक समय आधे पेट भोजन करके बच्चों का पेट पाला जा, किन्तु फिर भी निर्वाह न हो सका। बाजरा, कुकनी, सामा, ज्वार इत्यादि खाकर दिन काटने चाहे, किन्तु फिर भी गुजारा न हुआ तब आधा बथुआ, चना ा कोई दूसरा साग, जो सब से सस्ता हो उसको लेकर, सबसेसस्ता अनाज उसमें आधा मिलाकर थोड़ा-सा नमक डालकर उसे स्वयं खाती, लड़कों को चना ा जौ की रोटी देती और इसी प्रकार दादाजी भी समय व्यतीत करते थे। बड़ी कठिनता से आधे पेट खाकर दिन तो कट जाता, किन्तु पेट में घोटूँ दबाकर रात काटना कठिन हो जाता। यह तो भोजन की अवस्था थी, वस्त्र तथा रहने के स्थान का किराया कहाँ से आता ? दादाजी ने चाहा कि भले घरों में मजदूरी ही मिल जाए, किन्तु अनजान व्यकि्त का, जिसकी भाषा भी अपने देश की भाषा से न मिलती हो, भले घरों में सहसा कौन विश्वास कर सकता था ? कोई मजदूरी पर अपना अनाज भी पीसने को न देता था। डर था कि दुर्भिक्ष का सम है, खा लेगी। बहुत प्रयत्न करने के बाद दो-एक महलिाएं अपने घर पर अनाज पिसवाने पर राजी हुई, किन्तु पुरानी काम करने वालियों को कैसे जवाब दें ? इसी प्रकार अड़चनों के बाद पाँच-सात सेर अनाज पीसने को मिल जाता, जिसकी पिसाई उस समय एक पैसा प्रति पंसेरी थी। बड़ी कठिनता से आधे पेट एक समय भोजन करके तीन-चार घण्टों तक पीसकर एक पैसा या डेढ़ पैसा मिलता। फिर घर पर आकर बच्चों के लिए भोजना तायैर करना पड़ता। दो-तीन वर्ष तक यही अवस्था रही। बहुधा दादाजी देश को लौट चलने का विचार प्रकट करते, किन्तु दादाजी का ही उत्तर होता कि जिनके

कारण देश छूटा, धन-सामग्री सब नष्ट हुई और ये दिन देखने पड़े अव उन्हीं के पैरों में सिर रखकर दासत्व स्वीकार करने से इसी प्रकार प्राण दे देना कहीं श्रेष्ठ है, ये दिन सदैव न रहेंगे । सब प्रकार के संकट सहे, किन्तु दादीजी देश को लौटकर न गई ।

चार-पांच वर्ष में जब कुछ सज्जन परिचित हो गए और जान लि कि स्त्री भले घर की है, कुसमय पड़ने से दीन-दशा को प्राप्त हुई है, तब बहुत सी महिलाएं विश्वास करने लगीं । दुर्भिक्ष भी दूर हो गया था । कभी-कभी किसी सज्जन के यहाँ से कुछ दान मिल जाता, कोई ब्राह्मण-भोजन करा देता । इसी प्रकार समय व्यतीत होने लगा । कई महानुभावों ने, जिनके कोई सन्तान न थी और धनादि पर्याप्त था, दादीजी को अनेक प्रकार के प्रलोभन दिए कि वह अपना एक लड़का उन्हें दे दें और जितना धन मांगे उनकी भेंट किया जाय । किन्तु दादीजी आर्दश माता थीं, उन्होंने इस प्रकार के प्रलोभनों की किंचित-मात्र भी परवाह न की और अपने वच्चों का किसी-न-किसी प्रकार पालन करती रहीं ।

मेहनत-मज़दूरी तथा ब्राह्मणवृत्ति द्वारा कुछ धन एकत्र हुआ । कुछ महानुभावों के कहने से पिताजी के किसी पाठशाला में शिक्षा पाने का प्रबन्ध कर दिया गया । श्री दादाजी ने भी कुछ प्रयत्न किया, उनका वेतन भी बढ़ गया और वह सात रुपये मासिक पाने लगे । इसके बाद उन्होंने नौकरी छोड़, पैसे तथा दुअन्नी, चवन्नी इत्यादि वेचने की दुकान की । पाँच-सात आने रोज पैदा होने लगे । जो दुर्दिन आये थे, प्रयत्न तथा साहस से दूर होने लगे । इसका सब श्रेय श्री दादा जी को ही है । जिस साहस तथा धैर्य से उन्होंने काम लिया वह वास्तव में किसी दैवी शक्ति की सहायता ही कही जाएगी । अन्यथा एक अशिक्षित ग्रामीण महिला की क्या सामर्थ्य है कि वह नितान्त अपरिचित स्थान में जाकर मेहनत-मजदूरी करके अपना तथा अपने बच्चों का पेट पालन करते हुए उनको शिक्षित बनाये और फिर ऐसी परिस्थितियों में जब कि उसने अभी अपने जीवन में घर से बाहर पैर न रखा हो और जो ऐसे कट्टर देश की रहने वाली हो कि जहाँ पर प्रत्येक हिन्द प्रथा का पूर्णतया पालन किया जाता हो, जहाँ के निवासी अपनी प्रथाओं की रक्षा के लिए प्राणों की किंचित-मात्र भी चिन्ता न करते हों । किसी ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य की कुलवधू का क्या साहस, जो डेढ़ हाथ का घूंघट निकाले बिना एक घर से दसरे घर पर चली जाए । शूद्र जाति की वधुओं के लिए भी यही नियम है कि वे रास्ते में बिना घुघट निकाले न जाएँ । शूद्रों का पहनावा ही अलग है, ताकि उन्हें देखकर ही दूर से पहचान लिया जाए कि यह किसी नीच जाति की स त्री है । य प्रथाएँ इतनी प्रचलित हैं कि उन्होंने अत्याचार का रूप धारण कर लि है । एक समय किसी चमार की वधू, जो अंग्रेजी राज्य से विवाह करके गई थी, कुल-प्रथानुसार जमींदार के घर पैर छूने के लिए गई । वह पैरों में बिछुवे (नुपूर) पहने हुए थी और सब पहनावा चमारों का पहने थी । जमींदार महादेय की निगाह उसके पैरों पर पड़ी । पूछने पर मालूम हुआ कि चमार की बहू है । जमींदार साहब जूता पहनकर आए और उसके पैरों पर खड़े होकर दस जोर से दबाया कि उसकी अंगुलियाँ कट गई उन्होंने कहा कि यदि चमारों की बहुएँ बिछुवा पहनेंगी तो ऊँची जाति के घर की स्त्रियां क्या पहनेंगी?

ये लोग नितान्त अशिक्षित तथा मूर्ख हैं। किन्तु जाति-अभिमान में चूर रहते हैं । गरीब-से-गरीब अशिक्षित ब्राह्मण या क्षत्रिय, चाहे वह किसी आयु का हो, यदि शूद्र जाति की बस्ती में से गुजरे तो चाहे कितना ही दनी या वृद्ध कोई शूद्र क्यों न हो, उसको उठकर पालागन या जुहार करनी ही पड़ेगी । यदि ऐसा न करे तो उी समय वह ब्रह्मण या क्षत्रिय उसे जूतों से मार सकता हैं और सब उस शूद्र का ही देष बताकर उसका तिरस्कार करेंगे । यदि किसी कन्या या बहू पर व्यभिचारिणी होने का सन्देह किया जाए तो उसे बिना किसी विचार के मारकर चम्बल में प्रवाहित कर दिया जाता है । इसी प्रकार यदि किसी विधवा पर व्यभिचार या किसी प्रकार आचरण-भरष्ट होने का दोष लगाया जो तो चाहे वह गर्भवती ही क्यों न हो, उसे तुरन्त ही काटकर चम्बल में पहुंचा दें र किसी को कानोंकान भी खबर न होने दें । चहाँ के मनुष्य भी सदाचारी होते हैं । सबकी बहू-बेटी को अपनी बहू-बेटी समझते हैं । स्त्रियों की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए प्राण देने में भी कभी नहीं हिचकिचाते । इस प्रकार के देश में विवाहित होकर सब प्रकार की प्रथाओं को देखते हुए भी इतना साहस करना यह दादी जी का ही काम था ।

परमात्मा की दया से दुर्दिन समाप्त हुए। पिताजी कुछ शिक्षा पा गए और एक मकान भी श्री दादाजी ने खरीद लिया । दरवाजे-दरवाजे भटकने वाले कुटुम्ब को शान्तिपूर्वक बैठने का स्थान मिल गया और फिर श्री पिताजी के विवाह करने का विचार हुआ । दादीजी, दादाजी तथा पिताजी के साथ अपने मायके गई । वहीं पिताजी का विवाह कर दिया । वहाँ दो चार मास रहकर सब लोग वध की विदा कराके साथ लिवा लाए।

गृहस्थ जीवन

विवाह ही जाने के पश्चात् पिताजी म्युनिसिपैलिटी में पन्द्रह रुपये मासिक वेतन पर नौकर हो गए । उन्होंने कोई बड़ी शिक्षा प्राप्त न की थी । पिताजी को यह नौकरी पसन्द न आई । उन्होंने एक-दो साल के बाद नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ करने का प्रयत्न किया और कचहरी में सरकारी स्टाम्प बेचने लगे । उनके जीवन का अधिक भागी इसी व्यवसाय में व्यतीत हुआ । साधारण श्रेणी के गृहस्थ बनकर उन्होंने इसी व्यवसाय द्वारा अपनी सन्तानों को शिक्षा दी, अपने कुटुम्ब का पालन किया और अपने मुहल्ले के गणमान्य व्यक्तियों में गिने जाने लगे । वह रुपये का लेन-देन भी करते थे । उन्होंने तीन बैलगाड़ियां भी बनाई थी, जो किराये पर चला करती थीं । पिताजी को व्यायाम से प्रेम था । उनका शरी बझ सुद्दढ़ व सुडौल था । वह नियमपूर्वक अखाड़े में कुश्ती लड़ा करते थे ।

पिताजी के गृह में एक पुत्र उत्पन्‍ॉन हुआ किन्तु वह मर गया । उसके एक साल बाद लेखक (श्री रामप्रसाद) ने ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष ११ सम्वत् १९५४ विक्रमी को जन्म लिया । बड़े प्रयत्नों से मानता मानकर अनेक गंडे, तीबीज तथा कवचों द्वारा श्री दादाजी ने इस शरीर की रक्षा के लिए प्रयत्न किया । स्यात् बालको का रोग गृह में प्रवेश कर गया था । अतएव जन्म लेने के एक या दो मास पश्चात् ही मेरे शरीर की अवस्था भी पहले बालक जैसी होने लगी । किसी ने बातया कि सफेद खरगोश को मेरे शरीर पर घुमाकर जमीन पर छोड़ दिया जाय, यदि बीमारी होगी तो खरगोश तुरन्त मर जायेगा । कहते हैं हुआ भी ऐसा ही । एक सफेद खरगोश मेरे शरीर पर से उतारकर जैसे ही जमीन पर छोड़ा गया, वैसे

...शेष पृ. १३ पर

अमर देशभक्तअशफाक उल्लाह

- आर.के. टंडन

१९ दिसम्बर, १९२७ की सुबह उत्तर प्रदेश के फैजाबाद जेल में अशफाक उल्लाक खान ने स्नान किया और नमाज पढ़ी। इसके बाद उन्होंने कुरान पढ़ना शुरू कर दिया। कुछ देर बाद उनके बैरक में जेल अधिकारी आए। यह समय उनकी फांसी देने की कार्यवाही पूरी करने का था। उन्होंने अधिकारियों से हाथ मिलाया और उनके साथ उधर चल पड़े चहां उन्हें फांसी दी जानी थी। उनके कंधे पर एक बैग था जिसमें कुरान थी, उसकी आयतें पढ़ते हुए आगे बढ़ रहे थे। उन्होंने अपनी दाढ़ी बढ़ा रखी थी, फिर भी पहले से अधिक खूबसूरत दिख रहे थे। उनकी आंखों की चमक देख जेल अधिकारी तथा ब्रिटिश पुलिस अचंभे में थे। फांसी के तख्त पर चढ़कर उन्होंने कुछ पंक्तिया पढ़ीं-

शहीदों की मजारों पर लगेंगे हरबरस मेले / वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा //

बहुत ही जल्द टूटेंगी गुलामी की ये जंजीरें किसी दिन देखना आजाद ये हिंदोस्तां होगा //

इसके बाद उन्होंने फांसी के फंदे को खुद अपने गले में डाल दिया तथा वहां मौजूद अधिकारियों को अपनी बुलंद आवाज में खुदा हाफिज कहा। जल्लाद के रस्सी खींचते ही एक महान् क्रांतिकारी का अंत हो गया। फैजाबाद जेल में आज भी फांसी की वह जगह मौजूद है। यहां अशफ़ाक उल्लाह की बड़ी-सी मूर्ति लगी है।

अशफ़ाक उल्लाह का जन्म २२ अक्तूबर, १९०० को उत्तरप्रदेश के शाहजहांपुर में एक संभ्रांत पठान घराने में हुआ था। उनके पिता शफीक उल्लाह जमींदार थे। उनके पांच बच्चे थे, जिनमें अशफ़ाक सबसे छोटे थे। उन्हें सभी से काफी प्यार मिला। उनके माता-पिता पूरी कोशिश करते थे कि अशफ़ाक की सारी इच्छाएं पूरी हों। बचपन में वे काफी स्वस्थ और सुँदर दिखते थे। यही कारण था कि पड़ोस के बच्चे हमेशा उनके साथ खेलना चाहते थे। उनके अभिभावकों की इच्छा थी कि अशफ़ाक पढ़ाई खत्म करने के बाद सरकारी अफसर बने। मगर नियति ने उनके लिए कुछ और ही तय कर रखा था और वह एक देशभक्त का लक्ष्य था। अशफ़ाक ने अपनी जिन्दगी के महज २७ बसंत ही देखे, मगर इतनी कम उम्र में ही वे भारतवासियों के लिए स्मरणीय बन गए। उन्हें शहीद-ए-आज़म भी कहा जाता है जिसका अर्थ होता है शहीदों का राजा।

अशफ़ाक ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा घर पर हासिल की। उसके बाद उनका दाखिला शहजहांपुर के रिच मिशन हाई स्कूल में कराया गया। बाद में महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण प्रधानाध्यापक ने उन्हें स्कूल से निकाल दिया। इससे उनके अभिभावक काफी नाराज हुए। उन्होंने फिर उनका दाखिला कराया मगर अशफ़ाक ने कांग्रेस के आंदोलतों में भाग लेना नहीं छोड़ा। गांधी जी के आह्वान से सभी भारतीयों के दिल में स्वतंत्रता की आग जग गई थी। लेकिन गोरखपुर के करीब चौरी-चौरा में हुए कांड ने अंग्रेजों के खिलाफ अहिंसा की बजाय हिंसा को बढ़ावा दे दिया। क्रोध से पागल लोगों ने पुलिस स्टेशन में आग लगा दी जिससे २३ पुलिसकर्मी भी जल कर खाक होगए। इस घटना से गांधी जी को काफी दुःख पहुंचा था। इसलिए उन्होंने फरवरी १९२२ को असहयोग आंदोलन को वापस ले लिया। गांधी जी के इस फैसले से देश के युवाओं को गहरा धक्का लगा और वे स्वयं को उपेक्षित महसूस करने लगे थे। अशफ़ाक भी उन्हीं में से एक थे। इनका विचार देश को जल्द से जल्द आजाद कराने का था।

अशइफ़ाक जब आठवीं कक्षामें पढ़ रहे थे तब उनकी भेंट उसी स्कूल की नवीं कक्षा में पढ़ रहे महान् क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल से हुई। बिस्मिल एक क्रांतिकारी दल से जुड़े हुए थे। उन्हें संगठन के लिए कुछ बहादुर और जोशीले युवकों की जरूरत थी। उन्हें अशफ़ाक में कुछ गुण नजर आए। उसी समय अशफ़ाक को भी एक सच्चे देशभक्त मार्गदर्शक की तलाश थी। अशफ़ाक और बिस्मिल एक-दूसरे की देशभक्ति की इच्छा और जरूरत को पूरी कर सकते थे। जल्द ही वे एक-दूसरे के अच्छे मित्र बन गए। यह दोस्ती उनके जीवन के आखिरी दिनों तक बनी रही। दोनों को अपने देश प्रेम के लिए फांसी दे दी गई।

हां पंडित रामप्रसाद बिस्मिल आर्यसमाज में गहरी आस्था रखते थे, वहीं अशफाक पक्के मुसलमान थे। लेकिन दोनों की मंजिल एक थी। उस समय धर्म निरप्रेक्षता का कम बोलबाला था। अशफाक बिस्मिल को राम कहकर पुकारते थे। शाहजहांपुर के लोग उन देशभक्तों की मित्रता को अच्छी तरह से जानते थे। परिवार की मर्जी के खिलाफ अशफाक कई बार बिस्मिल के साथ आर्यसमाज की सभाओं में जाते रहे। एक बार वह आर्यसमाज मन्दिर में बैठे हुए थे, तभी उन्हें हिंदू-मुस्लिम दंगे की खबर मिली। कुछ मुसलमानों ने उसी समय मन्दिर में घुसने की कोशिश की। अशफ़ाक ने अपनी बंदूक निकालते हुए दहाड़ लगाई -- ''मैं एक पक्का मुसलमान हूं, इसके बावजूद इस मन्दिर की हर ईंट से मेरी संवेदनाएं जुड़ी हुई हैं। अगर तुम्हें धर्म के नाम पर लड़ना ही है तो बाजार में जाओ। अगर किसी ने यहां घुसने की कोशिश की तो उसकी लाश बिछा दूंगा, कुछ ही देर में वहां से सारे दंगाई गायब थे।

अशफ़ाक और बिस्मिल अलग धर्मों से सम्बन्ध रखते थे लेकिन दोनों की राजनैतिक इच्छाएं और समझ एक ही थी। दोनों का ध्येय अंग्रेजों के चंगुल से भारत माता को मुक्त कराना था। असहयोग आंदोलन के

दौरान १९२० और १९२१ में वे ब्रिटिश राज के खिलाफ आवाज उठाने के लिए लोगों को प्रेरित करने गांवों में पहुंच गए । असहयोग आंदोलन और खिलाफत आंदोलन के कमजोर पड़ने के बाद भी उनके हौंसले बुलंद रहे और इरादे अटल ।

काकोरी रेल डकैती में अशफ़ाक ने अहम योगदान दिया था । भारतीय क्रांतिकारियों के ध्येय को आर्थिक रूप से सहारा देने के लिए सरकारी खजाने को लूटने की योजना बनाई गई जो ट्रेन से लखनऊ लाया जा रहा था । ९ अगस्त, १९२५ को शहजहांपुर से लखनऊ जा रही ट्रेन नं. ८ काकोरी पहुंचने ही वाली थी कि चेन खींचकर रोक दिया गया । अशफ़ाक उल्लाह और उनके दोस्त सचिंद्रनाथ दख्शी और राजेन्द्र लाहिड़ी द्वितीय श्रेणी के डिब्बे से नीचे उतरे । गार्ड भी अपने कोच से बाहर आ कर पड़ताल करने लगा कि किस डिब्बे से चेन खींची गई है । उसी पल कुछ क्रांतिकारियों ने गार्ड को दबोच कर मुंह के बल लिटा दिया । क्रांतिकारी ट्रेन के दोनों छोर पर खड़े हो गए और अपनी-अपनी बंदूक से गोली दागी । इस बीच उन्होंने घोषणा की - ''यात्रियो, आप डरिए नहीं, हम क्रांतिकारी हैं और आजादी के लिए लड़ रहे हैं । चिंता मत कीजिए; आपकी जानमाल और इज्जत सबकुछ सुरक्षित है । आपसे अनुरोध है कि कृपया ट्रेन से बाहर न झांके ।'' इसके बाद चार युवा क्रांतिकारी गार्ड के बैन के अदर दाखिल हो गए । अशफ़ाक, बिस्मिल और उनके साथियों ने लोहे के बक्से को हथोड़े से कुछ ही मिनट में तोड़कर सारे रुपये लूट लिए । इस घटना ने भारत में क्रांतिकारी आंदोलन में जोश भर दिया तथा इसे नये मुकाम व नई राह पर लाकर खड़ा कर दिया । अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों को डकैतों का दर्जा देकर पूरे देश में गिरफ्तारी का आदेश जारी कर दिया । पुलिस ने शाहजहांपुर और आसपास के इलाकों में दबिश देना शुरू कर दिया ।

इससे पहले कि पुलिस अशफ़ाक को गिरफ्तार करती, वह अपने घर से भाग चुके थे । वह अपने घर से आधा मील दूर एक गन्ने के खेत में जाकर छुप गए । पुलिस की कड़ी चौकसी के चलते उनके दोस्त उन्हें रात में खाना पहुंचाते थे । अशफ़ाक को न ढूंढ पाने से हताश पुलिस ने उनके भाई की बंदूक का लाइसेंस निरस्त कर दिया और उनकी बंदूक जब्त कर ली । अशफ़ाक को छोड़ बाकी सभी क्रांतिकारियों को पुलिस गिरफतार कर चुकी थी । अशफ़ाक शाहजहांपुर छोड़ काशी जाने की फैसला किया । वह काशी के कुछ क्रांतिकारियों से संपर्क करना चाहते थे जो हाल ही में वहां से बचकर काशी पहुंचे थे । वह उनके साथ आगे की योजना भी बनाना चाहते थे । एक कठिन यात्रा के बाद वह काशी पहुंचने में सफल रहे । उन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के अपने कुछ दोस्तों से भेंट की । दोनों ने उन्हें कुछ समय तक शांत रहने की सलाह दी । अपने दोस्तों की सहायता से वह बिहार पहुंच गए । पलामू जिले के डाल्टन गंज में उन्होंने क्लर्क की नौकरी भी प्राप्त कर ली । उन्होंने बताया कि वह मथुरा के एक किसान परिवार से है । वह १० महीने तक उस संस्था में काम करते रहे ।

अशफ़ाक कवि थे और कविता भी किया करते थे । वह अपनी रचना कवि गोष्ठियों में सुनाया करते थे । उनकी संस्था का मालिक भी उनकी गोष्ठियों को काफी पसंद करता था । यहां पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें अशफ़ाक ने अपने शेर सुनाए जिसे सुनकर वहां मौजूद लोग खूब खुश हुए । मालिक ने तो कविता से खुश होकर अशफ़ाक का वेतन बढ़ा दिया । अशफ़ाक ने शिक्षा के इस माहौल में अपनी हिंदी को ओर मजबूत किया और बांग्ला भी सीख ली । अब वह हिंदी और उर्दू के साथ बांग्ला गाने भी गाने लगे । अशफ़ाक ने ज्यादातर कविताएं उर्दू में लिखीं जबकि कुछ हिंदी में भी । वे लिखने का काम वारसी और हजरत के नाम से करते थे । उन्होंने अपनी एक कविता में लिखा है -- ''हे, मेरी मातृभूमि, मैं सिर्फ तुम्हारी सेवा के लिए जिंदा हूँ । जब कभी भी मुझे जीवन त्यागने के लिए या फांसी के लिए कहा जाएगा, मैं खुशी-खुशी अपने बंधे हुए हाथों के बावजूद गीत गाऊंगा ।'' एक कविता में अशफ़ाक ने लिखा है -- ''क्या भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से युद्धभूमि में नहीं कहा है कि जिंदगी और मौत वास्तविक है ? अल्लाह कहां है वह स्थान ? एक इंसान मरने के लिए बाध्य है फिर भी लोग क्यों मौत से डरते हैं ? हमारी धरती माँ आजादी पाने के लिए वर्षों से तड़प रही है । क्या फर्क पड़ता है कि हम जिंदा हैं या मर गए....।'' उनकी कविताएं उनके देश प्रेम और उसकी गहराई को कथन करती हैं । वहदेशवासियों में देशभक्ति की कमी को लेकर दुखी रहते थे ।

कुछ समय बाद अशफ़ाक इस तरह छिपकर रहने से उकता गए इसलिए वह शाहजहांपुर के ही अपने एक स्कूल के पठान दोस्त से मिलने दिल्ली चले गए । अपने बचपन के दोस्त को मिलकर पठान बहुत खुश हुआ । उसने अशफ़ाक को अच्छा खाना खिलाया और देर रात तक बीते दिनों की बातें करता रहा । अगली सुबह जब अशफ़ाक गहरी नींद में सो रहे थे तभी किसी ने बड़े जोर से दरवाजा खटखटाया । नींद भरी आंखों से अशफ़ाक ने दरवाजा खोलकर देखा कि पुलिस उन्हें गिरफ्तार करने के लिए खड़ी थी । अशफ़ाक के पठान दोस्त को पैसे के लालच ने दोस्ती, कर्त्तव्य और एक जगह का होना भी नहीं रोक पाया था । पठान ने उन्हें खाना खिलाया, मित्र की तहर बातें की और अंत में धोखे से गिरफ्तार करा दिया।

पुलिस ने अशफ़ाक पर सरकारी गवाह बनने के लिए काफी दबाव डाला । पुलिस अधीक्षक तशदुक खान ने अशफ़ाक को बरगलाने की खूब कोशिश की । वह कुछ समय पहले ही प्रथम विश्व युद्ध के दौरान अरब में ब्रिटिश एजेंट रह चुका था । उसका मुख्य उद्देश्य अशफ़ाक को सरकारी गवाह बनाकर उनके साथियों के विरुद्ध प्रमाण जुटाना था । उसने अशफ़ाक से कहा--''एक मुस्लिम होकर हम हिंदुओं के देश की आजादी को समर्थन क्यों दें ? वे देश को आजाद कर अपने नियमों को लागू करना चाहते हैं । ऐसे में मुसलमानों को जान जोखिम में नहीं डालनी चाहिए । हम बिना फायदे के क्यों इस खतरे में पड़ें । इस पूरे घटनाक्रम से मुसलमानों का कोई लेना-देना नहीं है । यदि तुम यह समझ चुके हो कि क्या तुम्हारे फायदे में है और क्या नहीं तो मैं तुम्हारी सहायता करने के उपाय ढूंढ सकता हूँ ।''

इस पर अशफ़ाक ने झिड़कते हुए--''एक हिंदू राज्य ब्रिटिश देश में कहीं अधिक बेहतर है ।'' कुछ देर तक सोचने के बाद उन्होंने कहा--''इस मामले में मैं अकेला मुसलमान हूँ जिसे फांसी दी जाएगी । इससे मुस्लिम कौम का सम्मान बढ़ेगा । साथ ही यह मेरे लिए भी सम्मान की बात होगी । यदि मैं देश से गद्दारी करता हूँ तो पूरे मुस्लिम समाज को ठेस पहुंचेगी । मैं अपनी मौत से यह साबित करना चाहता हूँ कि मैं एक सच्चा मुसलमान हूँ जो मौत से नहीं बदनामी से डरता है । बदनामी तभी होगी, जब मैं देश से गद्दारी करूंगा ।'' इसके बाद भी अंग्रेज ने अशफ़ाक पर गवाह बनने के लिए काफी दबाव डाला,

फिर भी वे डिगे नहीं । वह देश की आजादी के प्रति पूरी तरह से समर्पित थे । वह अकसर अपने साथियों को कहा करते थे-- "भाइयो, इस आंदोलन में मैं अकेला मुसलमान हूँ । कृपया मुझे इस पवित्र कार्य के लिए बलिदान देने का मौका दें ।"

काकोरी कांड की चर्चा दूर-दूर तक होने लगी थी । ब्रिटिश सरकार अब इस मामले की अंतिम सुनवाई करने वाली थी । सरकार ने इस मामले में रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक उल्लाह खान, राजेन्द्र लाहिड़ी और रोशन सिंह को फांसी की सजा दी । अन्य को उम्रकैद की सजा दी गई । पूरा देश क्रांतिकारियों को दी गई फांसी की सजा के खिलाफ था । बाद में केन्द्रीय परिषद् के कुछ सदस्यों ने वायसराय के समक्ष सजा-ए-मौत को उम्रकैद में बदलने की अपील की । इस अपील को उस समय के अच्चतम न्यायालय कहे जानेवाले ग्रीवि काउंसिल के समक्ष भी रखा गया । लेकिन ब्रिटिश सरकार इन क्रांतिकारियों से बदला लेना चाहती थी, इसलिए सजा में कोई बदलाव नहीं किया गया ।

जब उनका वकील उनसे उनकी अंतिम इच्छा पूछने आखिरी बार मिलने गया तो उन्होंने कहा, "मेरी अंतिम इच्छा यही है कि आप कृपया कल आएं और देखें कि मुझे कैसे फांसी दी जा रही है ।" वकील को आंखों से आंसू निकल पड़े । उसने भारी मन से कहा- -"मेरे अन्दर इतनी हिम्मत नहीं है कि मैं आपको फांसी पर लटकता हुआ देख सकूं.... लेकिन मैं आपकी बहादुरी को बार-बार सलाम करता हूँ ।" अपनी फांसी के एक दिन पहले अशफ़ाक ने साफ-सुथरे कपड़े पहने और अपने दोस्तों से कहा--"कल मैं शादी करने जा रहा हूँ । यदि दुल्हन में कोई कमी हो तो कृपया मुझे बताओ ।" चुटकुले सुनने के बाद जिस तरह चेहरे पर हंसी आती है, वैसे ही सभी हंस पड़े । जिस व्यक्ति की अगले दिन फांसी होनी है वह ऐसी बातें करे, यह विश्वास करना मुश्किल होता है । अशफ़ाक उल्लाह को १९ दिसम्बर, १९२९ को फैजाबाद जेल में फांसी दे दी गई । ठीक उसी समय उनके दोस्त रामप्रसाद बिस्मिल को वहां से सौ किलोमीटर दूर गौरखपुर में फांसी दे दी गई । वे स्वतंत्रता संग्राम में ही एक-दूसरे के साथी नहीं रहे बल्कि मौत के वक्त भी उन्होंने एक-दूसरे का साथ निभाया । अपने अन्तिम समय में शारीरिक रूप से भले ही वे काफी दूर-दूर थे मगर उनकी आत्मा एक साथ थी । (*'देश के लिए क़ुर्बान'* से साभार)

...पृ. ९ का शेष

ही उसने तीन-चार चक्कर काटे और मर गया । मेरे विार से किसी अंश में यह सम्भव भी है, क्योंकि औषधि तीन प्रकार की होती हैं - (१) दैविक, (२) मानुषिक, (३) पैशाचिक । पैशाचिक औधियों में अनेक प्रकार के पशु या पक्षियों के मांस अथवा रुधिर का व्यवहार होता है, जिनका उपयोग वैद्यक के ग्रन्थों में पाया जाता है । इसमें से एक प्रयोग बडा ही कतुहलोत्पादक तथा आश्चर्यजनक ह है कि जिस बच्चे को जभोखे (सूखा) की बीमारी हो गई हो, यदि उसके सामने चमगादड़ चीकर लाया जाए तो एक दो मास का बालक मचगादड़ को पकड़कर उसका खून चूस लेगा और बीमारी जाती रहेगी । यह बड़ी उपयोगी औषधि है और ए महात्मा की बतलाई हुई है । जब मैं सात वर्ष का हुआ तो पिताजी ने स्वयं ही मुझे हिन्दी अक्षरों का बोध कराया और एक मौलवी साहब के मकतब में उर्दू पढ़ने के लिए भेज दिया । मुझे भली-भांति स्मरण है कि पिताजी अखाड़े में कुश्ती लड़ने जाते थे और अपने से बलिष्ठ तथा शरीर से डेढ़ गुने पट्ठे को पटक देते थे, कुछ दिनों बाद पिताजी का एक बंगाली (श्री चटर्जी) महाशय से प्रेम हो गया । चटर्जी महाशय की अंग्रेजी दवा की दुकान थी । वह बड़े भारी नशेबाज थे । एक समय में आधा छटांक चरस की चिलम उड़ाया करते थे । उन्हीं की संगति में पिताजी ने भी चरस पीना सीख लिया, जिसके कारण उनका शरीर तिनान्त नष्ट ो गया । दस वर्ष में ही सम्पूर्ण शरीर सूखकर हड्डियां निकल आईं । चटर्जी महाशय सुरापान भी करने गले । अतएव उनका कलेजा बढ़ गया और उसी से उनका शरीरांत हो गया। मेरे बहुत-छ समझाने पर पिताजी ने चरस पीने की आदत को छोड़ा, किन्तु बहुत दिनों के बाद ।

मेरे बाद पांच बहनों और तीन भाईयों का जन्म हुआ । दादीजी ने बहुत कहा कि कुल की प्रथा के अनुसार कन्याओं को मार डाला जाए, किन्तु माताजी ने इसका विरोध कया और कन्याओं के प्राणों की रक्षा की। मेरे कुल में यह पहला ही समय था कि कन्याओं का पोषण हुआ । प इनमें से दो बहनों और दो भाईयों का देहान्त हो गया। शे एक भाई, जो इस समय (१९२७ ई०) दस वर्ष । है और तीन बहनें बचीं । माताजी के प्रयत्न से तीनों बहनों को अच्छी शिक्षा दी गई और उनके विवाह बड़ी धूमधाम से किए गए । इसके पूर्व हमारे कुल की कन्याएं किसी को नहीं ब्याही गई, क्योंकि वे जीवित ही नहीं रखी जाती थी।

दादाजी बड़ी सरल प्रकृति के मनुष्य थे। जब तक वे जीवित रहे, पैसे बेचने का ही व्यवसाय करते रहे । उनको गाय पालने का बहुत बड़ा शौक था । स्वयं ग्वालियर जाकर बड़ी-बड़ी गायें खरीद लाते थे । वहां की गायें काफी दूध देती हैं । अच्छी गाय दस या पनद्रह सेर दूध दे बड़ी सीधी भी होती हैं । दूध दोहन करते समय उनकी टांगें बांधने की आवश्यकता नहीं होती और जब जिसका जी चाहे विना बच्चे के दूध दोहन कर सकता है । बचपन में मैं बहुधा जाकर गाय के थन में मुँह लगार दूध पिया करता था । वास्तव में वहां की गाये दर्शनीय होती हैं ।

दादाजी मुझे खूब दूध पिलाया कते थे। उन्हें अट्ठारह गोटी (बगिया बग्धा) खेलने का बड़ा शौक था । सायंकाल के समय नित्य शिव-मद्विदर में जाकर दो घण्टे तक परमात्मा का भजन किया करते थे । उनका लगभग पचपन वर्ष की आयु ें स्वर्गोरोहण हुआ ।

बाल्यकाल से ही पिताजी मेरी शिक्षा का अधिक ध्यान रखते थे और जरा-सी भूल रने पर बहुत पीटते थे । मुझे अव भी भली-भांति स्मरण है कि जब मै नगरी के अक्षर लिखना सीख रहा था तो मुझे 'उ' लिखना न आया । मैंने वहुत प्रयत ॉन किया। पर जब पिताजी कचहरी चले गए तो मैं भी खेलने चला गया । पिताजी ने कचहरी से आकर मुझ से 'उ' लिखवाया मैं न लिख सका । उन्हें मालूम हो गया कि मैं खेलने चला गया था इ पर उन्होंने मुझे बन्दूक के लोहे के गज से इतना पीटा कि गज टेढ़ा पड़ गया । भागकर दादीजी के पास चला गया, तब बचा । मैं छोटेपन से ही बहुत उद्दण्ड था । पिताजी के पर्याप्त शासन रखने पर भी बहुत उद्दण्डता करता था । एक समय किसी के बाग में जाकर आड़ू के वृक्षों में से सब आड़ू तोड़ डाले । माली पीछे दौड़ा, किन्तु मैं उसके हाथ न आया । माली ने सब आड़ू पिताजी के सामने ला रखे । उस दिन पिताजी ने मुझे इतना पीटा कि मैं दो दिन तक उठ न सका। इसी प्रकार खूब पिटता था, किन्तु उद्दण्डता अवश्य करता था । शायद उस बचपन की मार से ही यह शरीर बहुत कठोर तथा सहनशील बन गया।

ఆంగ్లేయుల
కుటిలనీతి-కుటిల విద్యావిధానము

(రచన- అందె గంగారాం ఆచార్య)

మన దేశీయులు ఆంగ్లేయుల నుండి భౌగోళిక స్వాతంత్ర్యమును బొందినారే కాని మానసిక బౌద్ధిక స్వాతంత్ర్యములను బొంది యుండలేదు. దేశము స్వాతంత్ర్యమును బొందినప్పటికీ మనవారు ఆంగ్లేయులయడుగుజాడలలోనే నడుచుచు, వారి భాషనే అధికార భాషగా మరియు బోధనా భాషగా వాడుచున్నారు. వారు వ్రాసిన చరిత్రలనే ఆధారముగాగొని బోధించుచున్నారు. ఆ కారణముననే నేడు మనవారు విదేశీభాష - సంస్కృతి - మతము - వస్తువులు మున్నగు వాటియందే ఎక్కువ మక్కువను జూపుచున్నారు. ఎందు కిలా మనవారు విదేశోనుమఖులై జాతికి - దేశానికి హానికల్గునట్లు వ్యవహరించు చున్నారు? దీనికి కారణమేమి ? యని ఒక్కసారైనా ఆలోచించినారా ? లేదు - లేదు. ఆలోచించుటకు సమయమెక్కడిది ? వైదిక (హిందు) బంధువులారా ! ఇట్టి యాలోచన కూడా స్ఫురణకు రాకపోవుట చేతనే మన వారింకను కనులు తెరువక పోవుట జరుగుచున్నది. ఇక రాను రాను విదేశీయము అంటెనే ప్రియము అను భావన మన మనస్సులలో నాటుకపోయి విదేశీభాష, విదేశీ సభ్యత, విదేశీ సంస్కృతి విదేశీయులనే ప్రేమించునంతటి దుర్దశ ప్రాప్తంచినది. స్వాతంత్ర్యము లభించి విదేశీయులనే ప్రేమించునంతటి దుర్దశ ప్రాప్తంచినది. స్వాతంత్ర్యము లభించి దశాబ్దములు గడిచినను ఎందుకిలా మనవారు భూ, ధన, మానప్రాణముల నన్నింటిని స్వయముగా విదేశీయుల హస్తగత మొనర్చుచు దేశద్రోహులు ధర్మభ్రష్టు లగుచున్నారు. ఇది యంతయు ఆంగ్లేయుల కుటిల నీతితో కూడిన విద్యావిధానము మరియు పరిపాల యొక్క పరిణామమని అనక తప్పదు.

ఆంగ్లేయులు కుటిలనీతితో చెట్టును నశింపజేయుటకు మూలమును నష్టమొనర్చునట్లు మన వైదిక (హిందూ) ధర్మమును నశింపజేయుటకు దాని మూలాధారమైన వేదమును నష్టమొనర్చి, వెదికులను (హిందువులను) క్రైస్తవులుగా మార్చుట కనేక యత్నములు గావించినారు. ఇంకను 'విభజించి-పాలించు' అను కుటిలనీతిని ప్రయోగించి ఇచ్చటి వైదికులలో (హిందువులలో) ఆర్యులు - దస్యులు - ద్రవిడులు అను జాతి భేదమును కల్పించి వారిని జాతీయ జీవనాధారమైన వైదిక ధర్మమునకు - సంస్కృతికి దూరము చేయయత్నించినారు. అటులే హిందువులు - మహమ్మదీయులు అను మతభేదమును సృష్టించి, భారతీయులను విడదీసి, చిరకాలము పాలించ యత్నించినారు.

ఈ కుటిలనీతిని వారెట్లుపయోగించి మన భూమినే గాక మన మస్తిష్కములను సైతము స్వాధీనముచేసికొని, మనలను బానిసలుగా జేసికొని, తమ పరిపాలననెట్లు సుస్థిరము జేసికొన యత్నించినారో యొకింతగమనించుడు.

క్రీ. శ. 1600 సం॥లో ఆంగ్లేయులు మొదట వర్తకము నెపముతో మన దేశమున గుజరాత్‌లోని సూరత్ పట్టణమునకు వచ్చి "ఈస్ట్ ఇండియా కంపెనీ" పేరుతో వర్తకము సాగినిచినారు. అనంతరము వారి రక్షణ నిమిత్తము కొద్ది కొద్ది సైన్యమునుంచు కొనుచు ఇచ్చటి రాజులలో పేరాశను జూపి పరస్పరము కలహములను సృష్టించినారు. ఇట్లు పరస్పర అంతఃకలహముల పరిణామముచే కొందరి రాజుల మెప్పును బడిసి చిన్న చిన్న రాజ్యములను కానుకగా బడసినారు ఇట్లు కుటిల నీతిచే రాజ్యమును విస్తరింపజేసికొని, 1757లో జరిగిన ప్లాసీ యుద్ధానంతరము కలకత్తా పిదప ఢిల్లీ రాజధానిగా రాజ్యాధికారమును హస్తగతము యుద్ధానంతరము కలకత్తా పిదప ఢిల్లీ రాజధానిగా రాజ్యాధికారమును హస్తగతము యుద్ధానంతరము కలకత్తా పిదప ఢిల్లీ రాజధానిగా రాజ్యాధికారమును హస్తగతము చేసుకొనివారు. ఇట్లధికారమును హస్తగతము జేసికొనిన పిమ్మట ఆంగ్ల భాషను అనుసంధానభాషగా - అధికారభాషగా జేసి, ఇచ్చటి వైదికులను (హిందువులను) ఆంగ్లభాషనభ్యసింపజేసినారు. ఆ పిదప వేదమును బైబిల్‌తో సమన్వయ పరుచ వేద భాష్యమొనర్చి వేదపరాఙ్ముఖుల జేసి మానసికముగా - బౌద్ధికముగా పరతంత్రులనొనర్చినారు. ఇట్లు వైదికులలో కొందరిని క్రైస్తవులుగా మార్చి తమ పోషకులుగా అనగా తమ పాలనను సమర్థించు వారలుగా తయారు జేసికొనివారు.

<u>"ఏ దేశపు జాతియైనను ఆదేశపు ధార్మిక చారిత్రక గ్రంథములను నాశనమొనర్చుటవలన తనంతట తాను ఎంత సులభముగా నాశనము కాగలదో, అంత సులభముగా మరో విధమున పతనముకాజాలదు". అను రోమన్ నాయకుడైన జూలియస్ ఐగ్రకోలా ప్రదర్శించిన కుటిలనీతిని</u> దృష్టియందుంచు కొనియే ఆంగ్లేయులు వైదిక మతస్థుల యొక్క ధర్మమునకు మూలాధారమైన వేదమును సమూలముగా నాశనము చేయుటకు అనేక ప్రయత్నములు చేసినారు. ఆ కారణముననే వైదికులు (హిందువులు) తమ ధర్మమునకు దాని మూలాధారమైన వేదమునకు దూరమ ఇతర మతములను ఇతర మత గ్రంథముల నాదరించుచున్నారు. కావున దీనికంతటికి ఆంగ్లేయుల కుటిలనీతి- విద్యావిధానములే కారణమనక తప్పదు. వారు క్రైస్తవ మత ప్రచారము ద్వారా తమ పరిపాలనను ఈ దేశమున సుస్థిరమొనర్చుకొన జూచినారు. అందుకై వారు మన ధర్మముపై మనకే ఏవగింపు కల్గునట్లు మనముఖ్య ధర్మగ్రంథమైన వేదమును క్రైస్తవమత గ్రంథమైన బైబిల్‌తో సమన్వయ పరచుటకు భాష్యమొనరించి తుదకు అది యనాగరికుల పాటలవలె నున్నదని కించపరచుచు

మనలను వేద పరాఙ్ముఖుల జేసినారు. మెక్స ముల్లర్ ఒకవైపు :

"The veda I feel convinced will occupy scholars for centuries to come & will take & maintain for ever as the most ancient book in the library of he makind".-Max muller (the Rigveda Samhita vol. 5. Edn. 1869. Preface P.X)

"వేదము సధాబ్దముల పొడవున విద్వాంసుల నాకర్షించుచు ఎల్లప్పటికి నిలువ గలదనియు, ప్రపంచ గ్రంథాలయములో అది అతి ప్రాచీన గ్రంథమనియు నేను నిశ్చయమగా భావించుచున్నాను" అని వైదికులను సంతుష్టులజేసి మరోవైపు

"Large number of hymns are childish in the extreme tedious, low, common place" (chips rom a German work shop II Edn. 1866 P.27)

"వేదములోని చాలా మంత్రములు చిన్న పిల్లల మాటలవలె అర్థరహితము - అస్పష్టము - నీచమైన సామాన్యముగ నున్నవి" అని పేర్కొంటు వేదముపై విశ్వానము గోల్పోవునట్లు భాష్యము చేసినారు.

అందుకే ఆంగ్లేయుల పరిపాలనా నంతరము కూడ ఎందరెన్ని విధముల యత్నించినను వేదపరాఙ్ముఖులైన కారణమున వైదికులలో (హిందువలలో) ధర్మాభిమానముగాని, జాతి అభిమానము గాని అగుపించుటలేదు.

వైదిక (హిందూ) మతస్థులు తమ ధర్మముయొక్క మూలాధారమైన వేదమునకు దూరమై ధర్మ భ్రష్టులగుటను జూచి వేదవేత్త, మహా యోగి, ఋషి దయానందుడు వైదిక (హిందూ) ధర్మమును వృక్షమను వృక్షము యొక్క వేదమను మూలమునకు నీటినందించి వైదిక ధర్మమును పునర్జీతింప జేసినాడు. దయానందుడే గాక యింకను ఎందరో ఆచార్యులు ఆర్యుల యీ ధర్మ విముఖతయను వ్యాధిని గాంచి నయము చేయ దర్శనములను, ఉపనిషత్తులను, భగవద్గీతను ఆధారముగా గొని తాత్కాలిక చికిత్సలెన్నియో జేసినారు, కాని వారి చికిత్సలన్నియు ఆకులకు, కొమ్మలకు నీరునందించి వృక్షమును పునర్జీవింపజేయ యత్నించి నట్లైనది. ఆ కారణమున మూలమున కిందని నీరు వ్యర్థమై పోవునట్లు చేసిన యత్నములన్నియు వృథాయై పోయినవి. కాని ఋషి దానందుడట్లుగాక వ్యాధికి గల మూలకారణము నెరిగి దానిని నిర్మూలించుటలో కృతకృత్యుడైనాడు.

ఋషి దయానందువీ సమాధిష్ఠుడై వ్యాకరణ - నిరుక్తాదీ గ్రంథము లాధార ముగా వేదార్థము నెరిగి వేదముల సత్యభాష్య మొనర్చి, <u>'వేదము సమస్త సత్యవిద్యల పుస్తకము'</u> అని నిరూపించి, వేదమును- వైదిక ధర్మమును పునర్జీవింప జేసినాడు. దయానందుని మార్గము దీర్ఘ రోగపీడితులైయున్న వైదికులకు (హిందు వులకు) నిపుణుడైన వైద్యుడు చేయు శస్త్ర చికిత్స (ఆపరేషన్) వలె మొదట కష్టముగా దోతీనను అయ్యది మున్ముందు జాతికి సుఖశాంతులు ప్రసాదించునట్టిదియు, దేశముయొక్క భవిష్యన్నిర్మాణమునకు తోడ్పడునట్టిదియునై యున్నది. నిస్వార్థము, నిష్పక్షపాతము, పరోపకార భావన గల ధార్మికులకు విద్వాంసులకు ఈ మార్గ మెంతయో ఆదర్శప్రాయమునై యున్నది.

వేదాంతర్గత ఆర్య-దస్యు శబ్దముల వివేచన:

ఆంగ్లేయులు భారత దేశమున తమ పరపాలనను సుస్థిరమ చేసికొనుటకుగాను మొదట భారతీయులను ముఖ్యముగా నధిక సంఖ్యాకులైన వైదిక (హిందూ) మతస్థులను క్రైస్తవులుగా మార్చుటకు సాహిత్య వినాశానమునకు పూనికొనినారు. అందుకై మొదట కుటిలనీతినుపయోగించి వేదమున కసత్యభాష్యమొనరించి కించపరచినారు. పిదవ <u>ఫ్రెంచి నాయకుడైన దూప్లే ప్రదర్శించిన 'వభజించిపాలించు'అను కుటిలనీతి</u> నుపయోగించి వేదాధారమున ఆర్యులు - దుస్యులు - ద్రవిడులు వేర్వరను జాతి భేదమును కల్పించి, వైదికులను (హిందువులను) విభజింతీ పాలించ యత్నించినారు. ఆంగ్లేయులు తమ కుటిల నీతిని ప్రయోగించి వేదములోని ఆర్య - దస్యు అను గుణ వాచక శబ్దములను జాతివాచక శ్దములుగా రూపొందించి, వాటికి నానార్థములు కల్పించి వైదికులలో ఆర్యులు - దుస్యులు లేక ద్రవిడులు అను భిన్నజాతులను సృష్టంచినారు. అంతటితో నాగక వేదము పశువుల కాపరుల - పిల్లల గీతముల వంటి మంత్రములతో కూడి యున్నదని నిరూపించ యత్నించినారు. అంతేగాదు ఆర్యులు ఈ దేశస్థులేగారని చరిత్రను సైతము తారుమారుచేసినారు. అందుకని మొదలిట్టి ఆర్య - దస్యు శబ్దముల యదార్థమును తెలుపుటకై వాని వివేచన ప్రస్తుతించ బడినది.

'ఆర్య' శబ్దము సంస్కృత వ్యాకరణమున 'ఋగతౌ' అను ధాతువునుండి యేర్పడినది. ఆ ధాతువున కర్థము 'గతి, క్రియ, జ్ఞానము' దీని ప్రకారము ఆర్య శబ్దముయొక్క ప్రథమ లక్షణము. ఎవరి జీవితము క్రియాత్మకమై యుండునో వారు ఆర్యులు. సోమరులై క్రియాశిన్యులైన వారు దస్యులు. అకర్మోదస్యుః వేదములలో దస్యు శబ్దమునకర్థము క్రియాశూన్యులని స్పష్టముగా చెప్పబడియున్నది. అందుకే యజుర్వేదము నందు 40వ అధ్యాయమున "కుర్వన్నేవేహ కర్మాణి జిజీవిషేచ్ఛతగ్ం సమాః । నిర్మిమ - లోకోపకారకర్మలు చేయుచునే నూరెండ్లు జీవించుడని మానవులకు ఆదేశమీయ బడినది.

ఆదర్శ జగద్గురువు మహర్షి దయా నందుడు ఆర్య పురుషుల లక్షణమున <u>'ఆర్యః ఉత్తమ విద్యా ధర్మ సామర్థ్యః ।'</u> ఉత్తమ జ్ఞాన -ధర్మ-శక్తి-సంపన్నులు' అని చెప్పి యున్నారు. మరియు తన అమరగ్రంథమగు సత్యార్థ ప్రకాశమున 8వ సముల్లాసములో వేదాధారమున ఆర్యదస్యు శబ్దములనిట్లు పేర్కొనినాడు.

వి జానీహ్యార్యాన్యే చ దస్యవో బర్హిష్మతే
రంధయా శాసదవ్రతాన్ ॥

ఋగ్ 1-51-8 ॥

ఉత శూద్రే ఉతార్యే ॥అథర్వ 1-9-62॥

ధార్మికులు - విద్వాంసులు - ఆప్తపురుషులునగు వారికి ఆర్యులనియు వీరికంటె భిన్నులగు వారికి దస్యులు అనగా దొంగలు - దుష్టులు - అధార్మికులు - అవిద్వాంసులనియు, బ్రాహ్మణ-క్షత్రియ - వైశ్యులు అను ద్విజులకు ఆర్యులనియు, శూద్రులకు అనార్యులనియు పేర్లు, వేదమిట్లు చెప్పుచుండ విదేశీయుల కపోల కల్పనలను

బుద్ధిమంతులెన్నడును నమ్మరాదు".

ఋషి ఋగ్వేద భాష్యమున ఇదే మంత్రములోని ఆర్య - దస్యు శబ్దములనిట్లు వ్యాఖ్యానించినాడు. మనుష్యులు దస్యు అనగా దుష్ట స్వభావమును వదిలి ఆర్య అనగా శ్రేష్ఠ స్వభావము నాశ్రయించి వర్తించవలెను ఋషి మరోచోట వేద భాష్యములో "అహమదదామార్యాయ" మంత్రమనకిట్లు వ్యాఖ్యానించినాడు. ఆర్యాః శ్రేష్ఠగుణకర్మ స్వభావయుక్త మనుష్యాః । అనగా శ్రేష్ఠగుణ కర్మ స్వభావము గలవారు ఆర్యులని తెలిపినాడు.

వ్యాస మహర్షి ఆర్యశబ్దమునకు లక్షణము నీ క్రింది విధముగా పేర్కొనినారు. కర్తవ్య మాచరన్ కార్యమకర్తవ్య మనాచరన్। తిష్ఠతి ప్రకృతాచారే స వా ఇతి స్మృతః ॥ ఎప్పుడును అధర్మమునాచరింపక తన విధ్యుక్త ధర్మము (వేదోక్త ధర్మము)నే ఆచరించుచు ప్రారంభించినట్టి లోకోపకార కార్యములలో దృఢ చిత్తులై యుండువారే ఆర్యులు అనగా కర్తవ్య పాలకులని అర్థము.

నిరుక్తకారుడగు యాస్క మునీంద్రుడు నిరుక్తములో ఆర్య శబ్దమున కర్థము "ఈశ్వరపుత్రః" అని చెప్పినాడు. భగవద్గీతలో శ్రీ కృష్ణుడు అర్జునుని పిరికితనమును అనార్యవృత్తియని పేర్కొనినాడు చూడుడు ॥

శ్లో ॥ కుతస్త్వా కశ్మలమిదం విషమే సముపస్థితమ్ ।

అనార్యజుష్టమస్వర్గ్యమకీర్తి కరమర్జున ॥ గీత 2-2 ॥

చాణక్య నీతి శాస్త్రములో గుణవంతులు ఆర్యులని చెప్పబడినది.

అభ్యాసాద్ధార్యతే విద్యా కులం శీలేన ధార్యతే । గుణేన జాయతేత్వార్యః కోపో నేత్రేణ గమ్యతే ॥ చాణుక్య 5/80 ॥

మహాభారతములో ఆర్య శబ్దమున కర్థ మిట్లు చెప్పబడినది.

శ్లో ॥ శాంతి స్థితిక్షుర్దాంతశ్చ సత్యవాదీ జితేంద్రియః

దాతా దయాలుర్ నమ్రశ్చ ఆర్యస్యా దష్టభిర్గుణైః

శాంతము, క్షమ, సత్యము - జితేంద్రియత్వము, దానము, దయా, వినయము మున్నగు గుణములు గలవారు ఆర్యులన బడుదురు.

శ్లో॥ న వైరముద్దీపయతి ప్రశాంతం న దర్పమారోహతి నాస్తమేతి ।

న దుర్గతోస్మీతి కరోత్యకార్యం తమార్య శీలం పమాహురార్యాః ॥ విదుర 1-117

ఎవరు శాంతించినట్టి వైరమును రెచ్చగొట్టరో, గర్వించరో, హీనత్వమును బొందరో మరియు విపత్తుల పాలయినను అనుచిత కార్యముల నొనర్చరో అట్టి యుత్తమ యాచరణగలవారిని ఆర్యజనులు - శ్రేష్ఠజనులు అని అందురు

రామాయణములో దశరథ మహారాజు అనార్య శబ్దమును ప్రయోగించుకొని తనను తానెట్లు నిందించుకొనినాడో చూడదగును.

అనార్య ఇతి మా మార్యాః పుత్ర విక్రయనంధ్రువమ ॥ రామా, అయో. -78 ॥

కౌటిల్యుని అర్థశాస్త్రములో ఆర్యమర్యాద లను వ్యవస్థీకరించ గల్గినవాడే రాజ్యాధికారి యని చెప్పబడినది.

వ్యవస్థితార్యే మర్యాదాః కృత వర్ణాశ్రమస్థితిః ।

ఆర్య శబ్దము శిక్కుల గ్రంథములలోను ప్రయోగించబడినది కాననగును.

జోతుమ్ సిఖ్ హమారే ఆర్య । దేవోసే స ధర్మకే కార్య ।

(పంచ ప్రకాశ్ - జ్ఞాని జ్ఞాన సింహజీ కృతము)

యోగి అరవిందుడు తాను నడిపిన 'ఆర్య' నామక పత్రికలో "What is significance of the name of Arya" అను వ్యాసములో ఆర్య శబ్దమును గూర్చి యిట్లు వివరించినాడు.

"The word arya expresses a particular ethical & social ideal, of well governed life, courtesy, nobility, straight dealing, courage, gentleness, purity, humanity compassion, protection of the weak, librality, observance of social duty, eagerness for knowledge, social accomplishment. There is no word in human speach that has nobler history".

- Arya vol I. P. 61.

"ఆర్య శబ్దమునైతిక, సామాజిక, ఆదర్శము, క్రమబద్ధమైన జీవనము, నిష్కపటము, మర్యాద, కులీనత, ఋజుమార్గము, ధైర్యము, సభ్యత, పవిత్రత మానవత్వము, సహనము, నిర్బలుల రక్షణ, ఔదార్యము, సామాజిక కర్తవ్యానుష్ఠానము, జ్ఞానపిపాస, సమాజ నిర్మాణము మొదలగు గుణములను సూచించును. అంతేగాదు, మానవీయ భాషలో ఆర్య శబ్దమును మించిన యుత్తమ భావమును చరిత్రను దెల్పునట్టి మరో శబ్దమే లేదు. ॥

సాధు టి.యల్. వాస్వానిగారు ఆర్య శబ్దమును గూర్చి యిటుల దెల్పినారు.

"The word Arya means noble 'True'".-T.L.Vaswni (Rishi Dayanand P.27)

"ఆర్య శబ్దమునకర్థము ఉత్తముడు - త్యవంతుడు"

సాధు టి. యల్‌వాస్వాని (ఋషి దయానంద్ పుట. 27)

ఈ విషయమున ప్రో॥ వినయకుమార్ సర్కార్ యమ్. ఏ. గారి 'ది పాజిటివ్ బ్యాక్ గ్రౌండ్ ఆఫ్ హిందూ సోషియాలోజి' అను పుస్తకములో ప్రిన్సిపాల్ పి.టి. శ్రీనివాస్ అయ్యంగార్ అనునాత దుల్లేఖించిన వాక్యము లెంతగానో గమనించదగియున్నవి.

"The Aryas & Dasyus or Dasas are refered to not as indicating different races. The words refer not to race but to cult......... The dasyus are without rites, fireless, non - sacrifices, without prayers, without risks, haters of prayer.....thus the difference between aryas and dasus was not one of rae but of cult".

- P.T. Srinivas Ayyangar.

(The positive background of Hindu socialogy).

"ఆర్య మరియు దస్యు లేక దాస శబ్దములు వివిధ జాతులను సూచించుటకు ప్రయోగించబడినవి కావున ఈ శబ్దములు గుణాచకములే కాని జాతి వాచకములు కావు.

...ఆ వైదికులు, వ్రతహీనులు, స్వార్థపరులు నాస్తికులు, దురాచార పరులైనట్టివారు దుస్యులు..... ఇట్లు ఆర్య - దుస్యు శబ్దముల భేదము సంస్కృతి - గుణ కర్మలను సూచించునదే కాని జాతిని కాదు".

- పి.టి. శ్రీనివాస్ అయ్యంగార్ (డిపాజిటివ్ బ్యాక్‌గ్రౌండ్ ఆఫ్ హిందూ సోషియాలోజీ)

కాలం చెల్లిన ఖలీఫా కోసం...

ముందుకు వెళ్లే ముందు ఒక అడుగు వెనక్కి.

1919 ఫ్లాష్‌బ్యాక్.

మార్చి 30 హర్తాళ్‌లో పోలీసు తూటాలకు ఢిల్లీ పౌరులు అనేకులు నేలకొరిగిన మరుసటి రోజు.

కాల్పుల్లో మరణించిన ఒక మహమ్మదీయుడి దేహాన్ని ఎవరో తీసుకువచ్చి ఒక మసీదులో ఉంచారు. అది తెలిసి సాయుధ పోలీసులు మసీదును చుట్టుముట్టారు. కబురందగానే ననేను హుటాహుటిన అక్కడికి చేరాను. అమరవీరుడి అంతిమయాత్ర మసీదు నుంచి బయలుదేరింది. దారిలో ఇంకో మహమ్మదీయ మృతవీరుడి శవయాత్ర మాతో కలిసింది. రెండు శవపేటికలనూ శ్మశానానికి తీసుకువెళ్లాం. పాతికవేల మంది మా వెంట వచ్చారు. వారిలో హిందువులూ ఎన్నో వేల మంది ఉన్నారు. సాయుధ పోలీసు శకటాలు మమ్మల్ని వెన్నంటి వచ్చాయి.

అక్కడ పని ముగించుకుని తిరిగి వచ్చి దుకాణాలను దగ్గరుండి తెరిపిస్తూండగా కిందటి రోజు రైల్వేస్టేషను, టౌన్‌హాల్‌ల వద్ద కాల్పుల్లో మరణించిన మరి కొందరి భౌతికకాయాలను పోలీసులు బంధువులకు అప్పగించారు. మృతులలో ఇద్దరు ముస్లింలు, ముగ్గురు హిందువులు. మహమ్మదీయుల శవపేటికలను ఆ మతస్థుల కాటికి ఊరేగింపుగా తీసుకువెళ్లారు. శవయాత్రలో పదిహేను వేల మంది జనం పాల్గొన్నారు. వారిలో ఎక్కువమంది హిందువులు. హిందువుల శవాల వెంట శ్మశానవాటికకు వెళ్లమని ముసల్మాన్ నాయకులు నన్ను కోరారు. దాదాపు పాతికవేల మంది మాతోబాటు దహనస్థలానికి వచ్చారు. వారిలో ఎక్కువమంది మహమ్మదీయులు.

అది అద్భుత దృశ్యం. ముసల్మాన్నుల శవపేటికలను హిందువులు మోశారు. హిందువుల పాడెలను ముసల్మాన్లు భుజాల మీద మోశారు. కాఫిర్ శవాన్ని మోస్తున్నామని ముస్లింలు సందేహించలేదు. మ్లేచ్ఛుడి శవాన్ని మోస్తున్నామని హిందువులూ సిగ్గుపడలేదు. శవపేటికలను శ్మశానానికి చేర్చేముందు ప్రార్థనల కోసం దింపినప్పుడు మొగం తిప్పుకోవలసిందని నన్నూ, హిందూ జనాన్నీ కొంతమంది ముల్లాలు చెప్పారు. అది చూసి ఇమాం పరిగెత్తుకుని వచ్చి వారిని వారించి 'స్వామీజీ ! మనమందరం దేవుడి బిడ్డలమే. మీరూ మాతో కలిసి ప్రార్థన చేయండి' అన్నాడు. నేను హృదయపూర్వకంగా వారితో గొంతు కలిపాను.

[*Inside Congress*, Swami Shraddhanand, pp.61-62]

నిజంగా ఇలా జరిగిందా ? స్వామి శ్రద్ధానంద కల్పించి రాశాడా ? – అని సందేహించాల్సిన పనిలేదు. పై ఘటనలు జరిగిన మూడు రోజులకు 1919 ఏప్రిల్ 4 శుక్రవారం జుమ్మామసీదులో అమరవీరుల ఆత్మశాంతికి వేల మందితో జరిగిన ప్రార్థన సమావేశానికి ముసల్మాన్లు శ్రద్ధానంద

స్వామిని సాదరంగా ఆహ్వానించి, ఆయనచేత వైదిక ప్రవచనం ఇప్పించడం చరిత్ర ప్రసిద్ధికెక్కిన అపూర్వ సంఘటన. ఆ వివరాలు మొదటి అధ్యాయంలో చూశాం. ముస్లింల మెహర్బానీకి జీవితాంతం అంగలార్చిన మహాత్మాగాంధీ, ఆ మాటకొస్తే ప్రపంచంలోనే మరే మహమ్మదీయేతరుడికి ఎన్నడూ దక్కని అపురూప గౌరవమది.

ముస్లింలతో సఖ్యతను ఆకాంక్షించిన వారు చరిత్రలో ఎందరో ఉన్నారు. ముస్లింల పరిపూర్ణ విశ్వాసాన్ని, ఆత్మీయానుబంధాన్ని కొద్దిమంది అన్యమతస్థులు మాత్రమే పొందగలిగారు. ఆ అరుదైన ఘనతను 1919 ప్రాంతాల్లో సంపాదించినవాడు శ్రద్ధానంద సరస్వతి. చారిత్రాత్మకమైన హర్తాళ్ రోజుల్లోనే కాదు. ఆ తరువాతా హిందూ – ముస్లిం ఐక్యతకు అత్యధిక ప్రాధాన్యమిచ్చి, దాన్ని సాధించటానికి శాయశక్తులా నిజాయితీతో పాటుపడినవాడు ఆ స్వామి.

అంతటివాడు కాబట్టే ఆ దరిమిలా హిందూ – ముస్లిం భాయ్‌భాయ్ పేరిట పొడసూపిన పెడధోరణులకు, నాటి ప్రమాదకర పర్యవసానాలకు అందరికంటే తీవ్రంగా స్పందించాడు. గాంధీ మహాత్ముడి స్ఫూర్తితోనే తాను రాజకీయాలలోకి అడుగుపెట్టినా, వ్యక్తిగతంగా ఆయనంటే ఎంత గౌరవం ఉన్నా అవసరం వచ్చినప్పుడు స్వామీజీ ఆయనతో నిష్కర్షగా విభేదించి, జంకు లేకుండా వ్యతిరేకించింది కూడా నిశిత ధర్మ నిబద్ధతతోనే.

అస్పృశ్యత విషయంలో గాంధీ అసలు తత్వం సహాయ నిరాకరణోద్యమానికి చేటగొట్టి, నిర్మాణ కార్యక్రమ ప్రహసనానికి మహాత్ముడు తెర తీసిన తరువాతగానీ శ్రద్ధానందస్వామికి అర్థంకాలేదు. కాని 'హిందూ – ముస్లిం సఖ్యత' నినాదం వెనుక బండారం సహాయనిరాకరణను గాంధీజీ తలకెత్తుకోవడానికి ముందే ఆ యథార్థవాదికి అవగతమైంది.

శ్రద్ధానందస్వామి నడుంకట్టి నిర్వహించిన 1919 అమృత్‌సర్ కాంగ్రెస్ నాటికి గాంధీగారు నిక్కమైన సహాయవాది. మార్షల్‌లా ఉక్కుపాదాల కింద పంజాబ్ యావత్తూ విలవిలలాడుతున్నా... జలియన్‌వాలాబాగ్‌లో వెయ్యికిపైగా ప్రాణాలు బలిగొన్న డయ్యర్ రాక్షసత్వాన్ని తెల్లదొరతనం అడ్డగోలుగా సమర్థించటం యావద్దేశాన్నీ దహించి చేస్తున్నా... బ్రిటిషు వారిని పల్లెత్తు మాట అనడానికి గాంధీ మహాత్ముడికి నోరు రాలేదు. పరాయి పాలకులు తెచ్చిపెట్టిన కంటితుడుపు సంస్కరణలకు మురిసి, వాటి అమలుకు చిత్తశుద్ధితో పాటుపడాలన్నదే అమృత్‌సర్ కాంగ్రెసులో ఆయన జాతికి చేసిన ఉపదేశమల్లా! కిరాతక ప్రభుత్వానికి వీర విధేయతతో సహకరించాలని ఆ నివేదిక మీద పిలుపిచ్చినవాడు మరికొద్ది నెలలకే ప్లేటు మార్చి, తెల్లవారిపై సహాయ నిరాకరణ కత్తిని దూశాడు.

అది కూడా పంజాబ్ ఘోరాలకు నిరసనగా కాదు. స్వరాజ్యాన్ని సాధించేందుకూ కాదు. జనం కళ్లనీళ్లు తుడవటానికి ఆ రెండిటినీ దరిమిలా ఇరికించారు. దేశ చరిత్రలో మొదటిసారిగా విదేశీ ప్రభుత్వం మీద జాతీయ స్థాయిలో సహాయ నిరాకరణ బ్రహ్మాస్త్రాన్ని గాంధీజీ ప్రయోగించింది ఖిలాఫత్ డిమాండుకు మద్దతుగా.

ఖిలాఫత్‌కూ, ఇండియాకూ బాదరాయణ సంబంధం కూడా లేదు. టర్కీ సుల్తాను

జర్మనీతో చేరి మొదటి ప్రపంచ యుద్ధంలో బ్రిటన్ కూటమికి వ్యతిరేకంగా పోరాడాడు. యుద్ధంలో బ్రిటన్ గెలిచి ఆటోమాన్ సామ్రాజ్యాన్ని రద్దు చేసింది. ఈజిప్టును, అరబ్ దేశాలను దాని ఆధిపత్యం నుంచి తప్పించి సుల్తాన్ కోరలు పీకింది. మక్కా మదీనా లాంటి మహమ్మదీయ పవిత్ర క్షేత్రాలు సుల్తాన్ చేతిలోంచి పోయాయి. అప్పటిదాకా అతడు ఖలీఫా హోదాలో ముస్లిం అధ్యాత్మిక అధినేతగా చలామణీ అయ్యేవాడు. అతడి అధినాయకత్వాన్ని మొగల్ చక్రవర్తులుగాని, ప్రపంచంలోని ఇతర దేశాల ముస్లిం ప్రభువులుగాని ఏనాడు అంగీకరించలేదన్నది వేరే సంగతి. స్వయంకృతాపరాధాల మూలంగా ఖలీఫా రాజ్యం కూలిపోవటంతో ఇస్లాంకు పుట్టి మునిగినట్టు ప్రపంచంలో ఎక్కడా లేనిది ఇండియాలో గగ్గోలు లేచింది. దాన్ని పనిగట్టుకుని ప్రేరేపించింది అలీ సోదరులు. ముస్లింల విశ్వాసం పొందటానికి దానికిమించిన చాన్సు రాదన్న ఆబతో కళ్లు మూసుకుని, వారికి వంత పాడి, ఖిలాఫత్ ఉద్యమాన్ని భుజాన వేసుకున్న మహనీయుడు గాంధీజీ.

కనీసం భారతదేశంలోని ముస్లింలైనా ఖిలాఫత్ అంశం మీద ఒక్క లాటిపై నిలిచింది లేదు. ఆ కాలాన భారతీయ ముస్లిం వర్గాల్లో ముఖ్య నాయకుడు మహమ్మదాలీ జిన్నా ఖిలాఫత్ డిమాండును నిష్కర్షగా ఖండించాడు. ఆధునిక జాతీయతను తృణీకరించి, ప్రపంచ ముస్లింలందరినీ కాలం చెల్లిన ఖలీఫా పెత్తనం కిందికి సమీకరించాలనే ప్రమాదకరమైన వాదనను మసర్థించరాదని గాంధీలాంటి జాతీయ నాయకులకు జిన్నా హితవు చెప్పాడు. ఆ రోజుల్లో ఆయన మతోన్మాదాన్ని ఏవగించుకున్న సిసలైన జతీయవాది. అయితే అలీ సోదరుల చేయి పట్టుకుని ముస్లిం సమాజాన్ని తనవైపు తిప్పుకోవాలన్న ఆరాటంలో గాంధీగారికి జిన్నా హితవు రుచించలేదు.

పోనీ కనీసం మహమ్మద్ అలీకైనా తాను లేవదీసిన సిద్ధాంతం మీద నిజంగా నమ్మకం ఉందా ? అదీ లేదు. పూర్వాశ్రమంలో అతడు కూడా జాతీయవాది. అప్పుడప్పుడూ విశాల దృష్టితో ఆలోచించగలిగేవాడు. "ఇండియా బయట ముస్లిం ప్రపంచంలో జరిగిన ఘటనలకు, వాటితో సంబంధం లేని భారతీయ ముస్లింలు ఆవేశపడిపోవటంలో అర్థం లేదు; బ్రిటిషు వారి మీద ఒత్తిడి తేవటానికి హిందూ కాంగ్రెసుతో చేతులు కలపటంలో మతిలేదు" అని తన కామ్రేడ్ పత్రికలో తానే ఆక్షేపించాడు. మళ్లీ తన మాటలు తానే మినిగి, వద్దన్న వాదాన్నే నెత్తికెత్తుకుని ఖిలాఫత్ లొల్లిని తెచ్చి పెట్టాడు.

అంతర్జాతీయ ముస్లిం సంఘీభావం వెర్రి అతడిలో ఎంత దూరం వెళ్లిందంటే-ముస్లింలు మతబద్ధంగా జీవించలేని దార్ ఉల్ హరబ్‌గా హిందుస్తాన్ మారింది; ఖురాన్‌లో చెప్పిన ప్రకారం ఇక్కడి ముస్లింల ముందున్నవి రెండో దారులు. అయితే జిహాద్; లేదా హిజరత్ (దేశం విడిచిపోవాలి)- అని ప్రేరేపించాడు. దుర్నిరీక్ష్యమైన బ్రిటిష్ సామ్రాజ్యపై 'జిహాద్' కుదిరే పని కాదు కాబట్టి హిజరత్ వైపు అమాయక ముస్లిం జనం మొగ్గారు. ఎక్కడెక్కడివారూ ఉద్యోగాలు, వృత్తి వ్యాపారాలు విడిచిపెట్టి అఫ్గానిస్తాన్ లాంటి ముస్లిం రాజ్యాలకు వేల సంఖ్యలో వలసపోసాగారు.

ఈ వరస చూసి స్వామి శ్రద్ధానందకు అరికాలి మంట నెత్తికెక్కింది. 'ఇదేమిటండీ? కీలక తరుణంలో దేశాన్ని శత్రువుల పాలుచేసి, భారతీయులు వేల సంఖ్యలో కాబూల్‌కు వలసపోవటమేమిటి? ఇంతవరకే అయితే అక్కడ ఎలాగో ఆశ్రయం ఇస్తారనుకుందాం కాని ఈ పిచ్చి ఇలాగే ముదిరి లక్షల మంది పోయి ఆ దేశ్ మీద పడి, వలసొచ్చే వారి సంఖ్య తన దేశ జనాభాను మించిపోతే అఫ్గాన్ సుల్తాన్ అంత మందికీ ఎలా తిండి పెడతాడు? దయచేసి ఈ వేలంవెర్రిని ఆపండి' - అంటూ మహాత్ముడికి జాబు రాశాడు. దానికి అటు ను??ంచి స్పందన ఏమిటి ?

"Mahatmaji's reply was truly characteristic of him. He said that he had not advised Hijrat but when our Muslim brethren thought it to be a call of their religion, what could he say...

[*Inside Congress*, Swami Shraddhanand, p.116]

(మహాత్మాజీ జవాబు ఆయన స్వభావానికి తగ్గట్టే ఉంది తాను హిజరత్‌ను కోరలేదు. కాని మన ముస్లిం సోదరులు అది తమ మతపరమైన కర్తవ్యంగా భావిస్తే తాను మాత్రం ఏమి చేయగలనని- ఆయన అన్నాడు.)

సామూహిక వలసలు ఆపమనడానికి నోరు రాకపోయినా టర్కీ వాళ్లే వద్దనుకున్న ఖలీఫాగిరీ ప్రేతానికి తిరిగి ప్రాణం పోయాలన్న వాదాన్ని మాత్రం గాంధీగారు మొక్కవోని పట్టుదలతో తలకెత్తుకున్నారు. దక్షిణాఫ్రికాలో ఉన్న కాలం నుంచే ఆయన ముస్లింలకూ, హిందువులకూ మధ్య మానసిక అగాథాన్ని గమనించాడు. ఇరు వర్గాల మధ్య స్నేహాన్ని, సుహృద్భావాన్ని పెంపొందించాలన్న ఆరాటంతో ఆయన దక్షిణాఫ్రికా నుంచి రాగానే అలీ బ్రదర్స్‌తో ఉత్తర ప్రత్యుత్తరాలు సాగించాడు. తమ పవిత్ర క్షేత్రాలు తిరిగి తమ ఖలీఫా అధీనంలో ఉండాలన్న ముస్లింల డిమాండు బహు న్యాయమైనదని, దాన్ని తాము సమర్థిస్తే ముస్లింల మైత్రి శాశ్వతంగా కాంగ్రెసుకు, హిందువులకు దక్కుతుందని ఆయన తొందర లెక్కలు వేశాడు. ఆ ఊపులోనే 1919 నవంబరు 23న ఢిల్లీలో జరిగిన ఆలిండియా ఖిలాఫత్ కాన్ఫరెన్సులో తనను అధ్యక్షుడిగా ఎన్నుకుంటామని ముస్లింలు అడగగానే సంతోషంగా ఒప్పేసుకున్నాడు. గాంధీ అండ, జాతీయ కాంగ్రెసు బాసట తమ పక్షాన ఉంటే బ్రిటిషు ప్రభుత్వాన్ని తేలిగ్గా తమ దారికి తెచ్చుకోగలమని ఖిలాఫత్ వాదులు తలపోశారు. ఇరుపక్షాలకూ ప్రయోజనాలు కలవడంతో మహమ్మదీయులు గాంధీని నెత్తిన ఎక్కించుకున్నారు. టర్కీ ససమస్యను బ్రిటిష్ పాలకులు పరిష్కరించకపోతే భారతదేశంలో వారికి వ్యతిరేకంగా సహాయ నిరాకరణ తప్పదని ఖిలాఫత్ కాన్ఫరెన్సు వేదిక నుంచి గాంధీ హెచ్చరించాడు.

సరిగ్గా ఆ సమయంలో అలీ సోదరులు జైలు నుంచి విడుదలయ్యారు. అమృత్‌సర్‌లో కాంగ్రెసు మహాసభల పందిరిలో కాంగ్రెసు వారు, ఖిలాఫత్ వాదులు విడిగా సమావేశమయ్యారు. మహాత్మాగాంధీ నేతృత్వంలో అంతా కలిసి ఖిలాఫత్ పని సాగించాలని అందులో నిర్ణయించారు. దాంతో ఖిలాఫత్ డిమాండుకు జాతీయ కాంగ్రెసు పూర్తి మద్దతు ప్రకటించినట్టు అయింది. కాంగ్రెసు మహాసభలు ముగిసిన వెంటనే అమృత్‌సర్‌లో ఆలిండియా ఖిలాఫత్ కమిటీ కూడి, వైస్రాయ్‌ని కలిసి ఖిలాఫత్ డిమాండును తీర్చమని విజ్ఞాపన పత్రం ఇచ్చింది. పండిట్ మోతీలాల్ నెహ్రూ, మదన్‌మోహన్ మాలవీయ వంటి జాతీయ నాయకులతోబాటు స్వామి శ్రద్ధానంద కూడా దాని మీద సంతకం చేశాడు.

మెమొరాండం వల్ల పని కాలేదు. ఇంకో ప్రతినిధి వర్గం లండన్ వెళ్ళి బ్రిటిషు ప్రభుత్వ నాయకులను కలిసినా ప్రయోజనం లేకపోయింది. దాంతో ఖిలాఫత్ అంశం మీద ముస్లింలకు న్యాయం చేకూర్చటానికి ఆంగ్ల ప్రభుత్వంపై అహింసాత్మక సహాయ నిరాకరణకు పాల్పడక తప్పదని గాంధీగారు చారిత్రాత్మక మానిఫెస్టోను వెలువరించాడు. మే 12న ఆలిండియా ఖిలాఫత్ కమిటీని సమావేశపరచి సహాయ నిరాకరణ ఉద్యమాన్ని చేపట్టాలని సెప్టంబరు 4న కాంగ్రెసు ప్రత్యేక మహాసభను కలకత్తాలో కొలువుదీర్చారు.

అది ఇంకో ప్రహసనం.

కుటుంబం సుఖంగా ఉండాలంటే

కుటుంబం సుఖంగా ఉండడానికి కుటుంబ సభ్యులు పరస్పరం ఎలా వర్తించాలో తెలిసికుందాం. కుటుంబంలో తల్లి, తండ్రి, కుమారుడు, కుమార్తె, కోడలు మొదలైనవారుంటారు. పరస్పరం ఎవరి విధులు వారు సక్రమంగా నిర్వర్తించుకుంటూ ఉంటే ఆ కుటుంబంలోని వారంతా సుఖ శాంతులతో ఉంటారు. గృహస్థ జీవనం సుఖమయం కావడానికి వేదం మనకు కొన్ని విధుల్ని నిర్దేశించింది. అధర్వవేదం ఏమన్నదో చూడండి.

అనువ్రతః పితుః పుత్రో మాత్రా భవతు సంమనాః । జాయా పత్యే మధుమతీం వాచం వదతు శాన్తివామ్ ॥ అధర్వ. 3-30-2

పుత్రః = పుత్రుడు, **పితుః** = తండ్రి యొక్క **అనువ్రతః** = ఉద్దేశ్యాలకు, వ్రతాలకు, ఆచార వ్యవహారాలకు అనుగుణంగా ప్రవర్తించే వాడుగా ఉండాలి, **మాత్రా** = తల్లి ఎడల, **సంమనాః** = ప్రేమార్ద్ర హృదయం కలవాడు, **భవతు** = అగుగాక, **జాయా** = భార్య, **పత్యే** = తనభర్తకొఱకు ఎల్లప్పుడు, **మధుమతీం** = మధురమైన, **శాన్తివామ్** = శాంతి దాయకమైన, **వాచమ్** = సంభాషణ, **వదతు** = చేయుగాక : ఇదే విధంగా భర్తకూడ తన పత్నితో మృదుమధురమైన ప్రసన్నమైన మాటలనే ప్రయోగించుగాక.

మనుష్యుడు సంఘజీవి. అతడు సమాజంలో ఉండి, అందరితో సత్సంబఠంధం పెట్టుకోవాలి. సమాజంలో అతనికి మొదటి సంబంధం తన తల్లిదండ్రులతో కలుగుతుఠంది. తరువాత సోదర - సోదరీమణులతో ఉంటుంది. తల్లిదండ్రులతో పుత్రునకుండవలసిన సంబంధం, వ్యవహారం, కర్తవ్యాలను గురించి పై మంత్రంలో వర్ణింపబడింది.

పుత్రుడు తండ్రి అడుగు జాడల్లో నడిచేవాడు కావాలి :-

1. **అనువ్రతః పితుః పుత్రః** : పుత్రుడు తండ్రియొక్క వ్రతాలకు (సత్సంభాషణ, ధర్మాచరణం మొదలైనవి) ఉద్దేశ్యాలకు అనుగుణంగా ప్రవర్తించాలి. వేదాన్ననుసరించి పుత్రుడు తండ్రిని అనుకరించి సద్ వ్రతాలు, సత్కార్యాలు, సదాచారాలను నిర్వర్తించేవాడుగా ఉండాలి. వ్రతములంటే ఏవో వేదమిలా చెప్పింది.

అగ్నేవ్రతపతేవ్రతం చరిష్యామి । తచ్ఛకేయం తన్మేరాధ్యతామ్ ఇదమహ మనృతాత్సత్యముపైమి ॥ -యజు. 1-5

ఓజ్ఞాన స్వరూప పరమేశ్వరా ! నీవు వ్రతాలను పాలించి రక్షించే వాడవు. నేను నావ్రతాలను పూర్ణంగా పాలించగల శక్తిని ప్రసాదింపుము. అసత్యాన్ని విడిచి సత్యాన్ని స్వీకరించడమే నావ్రతం.

ఈమంత్రాన్ననుసరించి, ఒక చెడును వదలి ఒక మంచిని స్వీకరించి ఆచరించడమే వ్రతమౌతుంది. ఈ ప్రపంచంలో మహోన్నతమైన ఆదర్శం కోసం ఎవరు వ్రతాన్ని (దీక్షను) ఆచరిస్తారో వారు జ్యోతిర్మయ పుంజంగా మెరుస్తారు. ప్రజలచే గౌరవ - సన్మానాలను పొందుతారు. జీవితంలో మంచి ఆశయాలు సద్వ్రతాలు లేనివారి జీవనం వ్యర్థమే అవుతుంది. చమత్కారంగా ఒక కవి ఇలా అంటాడు.

క్యా కహేం అహబాబ ! హమారే కారేను మామాం కరగయే । బి.ఏ.కియా నౌకరహుయే పెన్షన్ మిలీ ఔర మరగయే ॥

మిత్రమా ! ఏమి చెప్పేది ? మన సోదరులు ఏమేమి చేశారు ? గొప్ప పనులు చేసిపోయారు. - ఏమిటి ఆ గొప్ప పనులు ? బి.ఏ. చదివారు. నౌకరి సంపాదించారు. పెన్షన్ దొరికింది. చివరకు చనిపోయారు.

తినడం - త్రాగడం - బిడ్డలను కనడం - ఇవి జీవితానికి లక్ష్యం కావు. కారాదు. వివాహం యొక్క ఉద్దేశ్యం ఏమిటి ? కేవలం భోగ విలాసాల ననుభవించడమేనా ? స్త్రీ, పురుషులిరువురు పరస్పరం సహకరించుకొంటూ, ఒక వైపు పురుషార్థాల్లో అంతిమ పురుషార్థమైన మోక్షం కొరకు ప్రయత్నిస్తూ మరొకవైపు తమ దేశానికి తమయొక్క ఉత్తమ ప్రతినిధిని సమర్పించడమే జీవిత లక్ష్యం కావాలి. పుత్రుడు తన తండ్రి ప్రారంభించిన వ్రతాన్ని, అసంపూర్ణంగా మిగిల్చిన ఉద్దేశ్యాలను ముందుకు తీసికొని పోవాలి. తల్లి దండ్రుల్ని సంకటాల నుండి రక్షించాలి.

పితృమహత్వం అనన్యమైంది అతి ప్రశంసనీయమైంది. మహాభారతంలో యక్షుడు ధర్మరాజును ఇలా ప్రశ్నిస్తాడు.

యక్షుడు :- కింస్విదుచ్చతరం చ ఖాత్ ॥ - మహాభారతం వనపర్వం 31-3-59 ఆకాశం కంటె ఉన్నతమైనదేది ?

యుధిష్ఠిరుడు :- ఖాత్ పితోచ్చతర స్తథా ॥ తండ్రి ఆకాశం కంటె ఉన్నతమైనవాడు.

కన్నబిడ్డపై తండ్రికుండే ఉత్తమ భావనల్ని మనం వర్ణించలేం. వాటిని మనం కొలవలేం. తండ్రి ప్రపంచంలో అందరిని జయించాలను కుంటాడు. కాని తన పుత్రునకు ఓడిపోవాలనుకుంటాడు. అంటే తన పుత్రుడు తనకంటే మహిమాన్వితుడు కావాలని కోరుకుంటాడు. ఇది ఎంతటి భవ్యభావనో దివ్య సంకల్పమో చూడండి.

కుమారుడు తండ్రి యొక్క ఆశయాలను, ఉద్దేశ్యాలను, సత్యపాలన, ధర్మాచరణాది వ్రతాలను అనుసరినిచి జీవించుతూ పూర్తి సహకారాన్నిచ్చి తండ్రిని సంతోష పెట్టాలి. మర్యాద పురుషోత్తముడైన శ్రీరామచంద్రుడి నుండి ఆదర్శ పితృభక్తి పాఠాన్ని మనం నేర్చుకోవాలి.

మీ తండ్రి నిన్ను 14 సం॥లు వనవాసానికి సంపనున్నాడని రాముని పిలిచి కైకేయి చెప్పినపుడు రాముడన్న మాటలు గుర్తుంచుకోదగినవి.

అహం హి వచనాద్ రాజ్ఞః పతేయ మపి పావకే । భక్షయేయం విషం తీక్ష్ణ మజ్జేయ మపి చార్ణవే ॥ - వా.రా.అయోధ్య. 8-28

అమ్మా, తండ్రిగారు అజ్ఞాపించినట్లయితే అగ్నిలో దుముకడానికి, భయంకరమైన విషాన్ని తినడానికి, మహాసముద్రంలో మునగడానికైనా నేను సిద్ధమేనన్నాడు శ్రీరాముడు.

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना के तत्वावधान में

सपरिवार वैदिक प्रशिक्षण शिविर

दि. 7 जनवरी 2016 से 10 जनवरी 2016 रविवार तक

स्थान : पंडित नरेन्द्र भवन, राजमोहल्ला, रामकोट, हैदराबाद

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना के तत्वावधान में पारिवारिक साधना प्रशिक्षण शिविर के आयोजन का निर्णय लिया गया है। यह शिविर पंडित नरेनद्र भवन में **दिनांक 7 जनवरी 2016 गुरुवार से 10 जनवरी 2016 रविवार तक** आयोजित है । प्रशिक्षण हेतु साधकों को परिवार सहित **6-1-2016** के सायंकाल तक प्रशिक्षण स्थल पंडित नरेन्द्र भवन, राजमोहल्ला हैदराबाद पहूंचना पडेगा। जनवरी ठंड का मौसम है अतः आवश्यक कपडे लेते आएं । अन्य व्यवस्था सभा की ओर से की जाएंगी । परिवारों की संख्या को सीमित रखा गया है। अतः परिवार अपना नाम सभा में प्रति व्यक्ति रु. **100/-** जमा करवाकर अंकित करवा लें । **5** वर्ष से **18** वर्ष तक के लड़के-लड़कियों को किसी भी परिस्थिति में प्रवेश नहीं मिलेगा । माँ-बाप **5** वर्ष से कम उम्र के बच्चों को अपने साथ ला सकते हैं । **18** वर्ष से ऊपर के युवक-युवतियों को जो गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने के इच्छुक हैं उन्हें शिविर में प्रवेश दिया जाएगा । हैदराबाद शहर से संम्बधित परिवार या ऊपर लिखित अनुसार व्यक्ति अपना नाम अंकित करवाकर शिविर में प्रातः से रात्री भोजन तक शिविर में भाग ले सकते हैं । रात्री निवास हेतु वे अपने घर जाकर पुनःप्रातःकाल समय से शिविर में भाग लेना अनिवार्य है । विशेष अवस्था में ही उन्हें समय की छूट दी जाएगी । तेलुगु भाषा में अनुवाद की व्यवस्था की जाएगी ।

शिविर आचार्य सोमदेवजी शास्त्री मुम्बई के सानिध्य में स्वामी सुधानन्दजी राउरकेला उड़िसा व आचार्या पवित्रा वेदालंकारजी गुरुकुल हाथरस तथा पंडित कैलाशजी कर्मठ आयुर्वेदाचार्य की देखरेख में सम्पन्न होगा । प्रातः **4.00** बजे से दिनचर्या प्रारम्भ होकर रात्री **1.30** तक चलेगी । इस शिविर की विशेषता यह रहेगी कि सायंकाल के समय शंका समाधान के साथ, विभिन्न प्रकार की बीमारियों के लिए आयुर्वेदिक उपचार हेतु परामर्श भी किया जा सकता है । आर्य समाजी कार्यकर्ता व अधिकारी अपने साथ अपने परिवार के नई पीढ़ी के सदस्यों को और अपने मित्र व अन्य परिचित साथियों के परिवारों के व्यक्तियों को परिवार सहित इस शिविर में शामिल करने का भरसक प्रयत्न करें ता कि आज की पीढ़ी के परिवारों को वैदिक मान्यताओं और परम्पराओं में प्रशिक्षण दिया जा सके । परिवारों की संख्या सीमित रखी जा रही है अतः कार्यालय से संपर्क कर **अभी से अपने नाम परिवार सहित तुरंत सभा कार्यालय में अंकित करवा लें । अंतिम तिथि दिनांक** 5 **जनवरी** 2016 मध्याह्न 3.00 बजे तक है

सम्पर्क :

१) सभा कर्यालय
श्री पं. प्रियदत्तजी शास्त्री
040-24756983, 040-24753827

२) पंडित नरेन्द्र भवन
श्री श्रीनिवास जी
040-66758707

भवदीय

श्री हरिकिशन वेदालंकारजी
मंत्री सभा
मोबाईल : **9703066001**

श्री विट्ठलराव आर्यजी
प्रधान सभा
मोबाईल : **9849560691**

'मूक प ु भैंसों हत्या रोकने पर महर्शि दयानन्द और उदयपुर नरे । महाराणा सज्जन सिंह के बीच वार्तालाप और उसका भुभ परिणाम'

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

स्वामी दयानन्द जी सितम्बर, 1882 में मेवाड़ उदयपुर के महाराजा महाराणा सज्जन सिंह के अतिथि थे। नवरात्र के अवसर पर वहां भैंसों का वध रोकने की एक घटना घटी। इसका वर्णन महर्शि के 10 से अधिक प्रमुख जीवनीकारों ने अपने-अपने ग्रन्थों किया है। हम यहां मास्टर लक्ष्मण आर्य द्वारा महर्शि दयानन्द के उर्दू जीवन चरित में प्रस्तुत घटना को प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु कृत हिन्दी अनुवाद से प्रस्तुत कर रहें हैं:

स्वामी जी मूक प ुओं के वकील बने ---जब विजयाद मी पर्व आया तो स्वामी जी बग्घी पर बैठकर द हरा देखने गये तो नवरात्र पर्व पर बलि के लिए भैंसे बहुत मारे जा रहे थे। इस पर स्वामी जी ने उदयपुर के राजदरबार से एक तार्किक विवाद किया। एक अभियोग के रुप में कहा कि भैंसों ने हमें वकील किया है। आप एक अभियोग के रुप में कहा कि भैंसों ने हमें वकील किया है। आप राजा हैं। हम आपके सामने इनका केस (अभियोग) करते हैं। पुरातन प्रथाओं के नए-नए रूप दिखाते हुए अन्त में स्वामी जी ने उन्हें समझा दिया कि भैंसों के मारने से पाप के अतिरिक्त कुछ भी लाभ नहीं। यह अत्यन्त क्रूरता है, अन्याय है। तत्प चात् स्वामी जी ने उन्हें इससे रोका। तब महाराणा जी (उदयपुर नरे । महाराणा सज्जन सिंह) ने स्वीकार किया और कहा कि हम अविलम्ब तो बन्द नहीं कर सकते, न ऐसा करना उचित है। लोग क्रुद्ध होंगे। तब स्वामी जी ने कहा, अच्छा भानैः भानैः घटा दो। तदनुसार वहीं सूची बनाई गई। राणा जी ने प्रतिज्ञा की कि मैं धीरे-धीरे इसे घटाने का प्रयास करूंगा।

दयानन्द जी गायों के समान भेंस, बकरी, भेड़ इत्यादि सभी उपकारी पशुओं की सुरक्षा व संवर्धन के पक्ष में तथा उनकी हत्या कर मांसाहार के विरुद्ध थे। वह कहते थे कि पशुओं की हत्या वा मांसाहार से मनुष्य का स्वभाव हिंसक बन जाता है और वह योग विद्या के लिए पात्र वा योग्य नहीं रहता। योग विद्या का मुख्य लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति और उसका साक्षात्कार है जिसके लिए योगी को बहुत कम मात्रा में शुद्ध शाकाहारी भोजन ही लेना होता है। मांसाहार करने वालों को अपने इन कर्मों का फल ईश्वर की व्यवस्था से कालांतर में भोगना ही होता है। अवश्यमेव ही भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम। "मनुष्य को मनुष्य मननशील होने के कारण व सत्य व असत्य को विचार कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करने के कारण कहते हैं

स्वामी दयानंद द्वारा दी गई मनुष्य की परिभाषा भी पाठ कों के लाभार्थ प्रस्तुत हैः 'मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामथ्य से धर्मात्माओं, की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुण रहित क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरुप धर्म से पृथक कभी न होवें।' स्वामी जी न इन पंक्तियों में जो कहा है, उसका उन्होंने अपने जीवन में सदैव पूर्णतः पालन किया और विरोधियों के षडयन्त्र का शिकार होकर दीपावली 30 अक्तूबर, 1883 ई. को अपना जीवन बलिदान कर दिया।

हम आशा करते हैं कि पाठक इससे उचित शिक्षा व मार्गद र्शन ग्रहण करेंगे।

-मनमोहन कुमार

Date of Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month
आर्य जीवन 03-01-2016 Registered-Reg. No. HD/783/2015-17 RNI.No.52990/93

ఆర్య జీవన్
హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, D.No. 4-2-15
మహర్షి దయానంద మార్గము సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్-95.

Vithal Rao Arya, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax: 040-24557946 Editior:
సంపాదకులు - విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్ సభ

ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. - తెలంగాణ ఆధ్వర్యంలో

సకుటుంబ వైదిక ప్రశిక్షణ సాధనా శిబిరము

తేది 7 జనవరి 2016 నుండి 10 జనవరి 2016 ఆదివారము వరకు

స్థానము : పండిత్ నరేంద్ర భవనము, రాజమొహల్లా, రామ్‌కోట్, హైదరాబాదు.

ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ ఆధ్వర్యములో సకుటుంబ వైదిక సాధనా ప్రశిక్షణ శిబిరము ఆచార్య సోమదెవ్ శాస్త్రి ముంబాయి గారి ఆధ్వర్యంలో నిర్వహించుటకు నిర్ణయించనైనది. ఈ శిబిరము **గురువారము తేది 7వ జనవరి 2016** నుండి **ఆదివారము 10వ జనవరి 2016** వరకు నిర్వహించబడును. శిబిరములో పాల్గొనువారు కుటుంబ సమేతముగా బుధవారము **6వ జనవరి 2016** సాయంత్రం వరకు పండిత్ నరేంద్ర భవనమునకు చేరుకోవలెను. జనవరి మాసంలో చలి వుంటుంది కనుక అవసరమైన దుస్తులు తీసుకొని రావలెను. మిగత ఏర్పాట్లన్నియు ఆర్యప్రతినిధి సభ వైపు నుండి చేయబడును. శిబిరములో పాలొను వారు ప్రతి వ్యక్తి **రూ॥ 100/-** సభ కార్యాలయంలో జమ చేయించి తమ తమ పేర్లను కుటుంబ సమేతంగా నమోదు చేసుకోవలెను. ఈ శిబిరములో **5 నుండి 18 సం॥ల** వయస్సుగల పిల్లలకు ఎట్టి పరిస్థితులలో ప్రవేశము ఉండదు. తల్లిదండ్రులు సం॥రాల కంటే తక్కువ వయస్సుగల పిల్లలను తమ వెంట తీసుకొనిరావచ్చును. 18 సం॥రాల కంటే ఎక్కువ వయస్సుగల యువతీ యువకులకు అనగా ప్రత్యేకంగా గృహస్థ ఆశ్రమములో ప్రవేశించుటకు ఆకాంక్షగల వారికి శిబిరములో ప్రవేశము ఉండును. హైదరాబాదు నగరానికి సంబంధించిన శిబిరార్థులు రాత్రి యందు విశ్రాంతి కొరకై తమ-తమ ఇంటికి వెళ్ళవచ్చును కాని వారు తప్పక ఉదయము నుండే కార్యక్రమములో సమయానుసారము పాల్గొనవలసి ఉంటుంది. విశేష పరిస్థితులలో మాత్రమే సమయములో మార్పు చేసుకోవుటకు అనుమతించబడును.

ఈ శిబిరము, భారతదేశ గొప్ప విద్వాంసులైన ఆచార్య సోమదేవ్ శాస్త్రి గారి ఆధ్వర్యంలో నిర్వహించబడుచున్నది. వీరి సానిధ్యంలో నిర్వహించబడు ఈ శిబిరములో రావూర్‌కేల ఒడిస్సా నుండి స్వామి సుధానంద్ సరస్వతి గారు, గురుకుల్ హాథరస్ నుండి ఆచార్యా పవిత్రా వేదాలంకార్ గారు మరియు ప్రసిద్ధ భజనోపదేశకులు మరియు ఆయుర్వేదాచార్య పండిత్ కైలాష్ ఖర్మర, కోల్‌కత్తా గారు పాల్గొనెదరు.

4.00 గం॥ల నుండి ప్రారంభమయ్యే ఈ శిబిరము **రాత్రి 9.30 గం॥ల** వరకు జరుగును. ప్రశిక్షణతో పాటు ఈ శిబిరము యొక్క విశిష్టత ఏమనగా సాయంకాలం ప్రశ్నోత్తరాలు, సందేహ నివారణాలుతో పాటు ఆరోగ్య సంబంధమైన చర్చ, పరామర్శ మరియు ఉపచారము ఆచార్య కర్మర్ గారితో చేయబడును కావున తమరు తమరి పరిచితులు మరియు మిత్రుల కుటుంబాల నుండి కుటుంబ సమేతముగా శిబిరములో పాల్గొనవలెనని కోరుచున్నాము. మీ-మీ కుటుంబాలలోని నేటి కొత్త వంశజలను (న్యూ జనరేషన్‌ను) వైదిక ప్రశిక్షణ శిబిరములో పాల్గొనుటకు ప్రోత్సహించి వచ్చేటట్లు ప్రయత్నం చేయవలెను. కుటుంబాల సంఖ్యను మరిమితంగా ఉంచుటకు నిర్ణయించనైనది కావున వెంటనే కుటుంబ సమేతంగా తమ పేర్లను సభ కార్యాలయంలో నమోదు చేసుకోగలరని కోరుచున్నాము. **ఆఖరి తేది 5 జనవరి మధ్యాహ్నం 3.00 గం॥ల వరకు.**

సంపర్కము :

1) సభ కార్యాలయము - పండిత్ శ్రీ ప్రియదత్త శాస్త్రి గారు, 040-24756983, 24753827
2) పండిత్ నరేంద్ర భవనము - శ్రీ శ్రీనివాస్ గారు, 040-66758707

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
Editor: VithalRao Arya • acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691

సంపాదకులు : విఠల్‌రావు ఆర్య, ప్రధాన్, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాదు-95. Ph: 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
संपादक: श्री विट्ठलराव आर्य प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रेस चिक्कडपल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशक: आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-95.